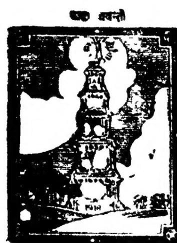
नया चमन

[उर्दू की नयी शायरी का मजमुआ]

एडीटर

श्री गोपीनाथ 'अमन', देहली



प्रकाशक

दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा,

त्यागरायनगर, मद्रास

 १९४६ [क़ीमत २।]

हिन्दी प्रचार पुस्तक-माला, पुष्प—८६.

पहला संस्करण, सितंबर ४६—१.

H. P. Press, Madras-P.I. Card 154-10-46

क्यों ?

दक्खिन में प्रचार का काम 'हिन्दी' नाम से ही शुरू हुआ। मगर उस वक़्त भी प्रचार करनेवालों के सामने यह साफ़ था कि वे हिन्दी के नाम पर उस भाषा का प्रचार करने जा रहे हैं—जो हिन्दू और मुसलमान—दोनों के इस्तेमाल में आती है और जो दोनों लिपियों में लिखी जा सकती है। इसलिए शुरू से ही हमारे यहाँ हिन्दी पढ़ाने का काम करनेवालों के वास्ते उर्दू हरूफ़ जानना ज़रूरी माना गया था।

मगर हमारे रास्ते की सबसे बड़ी कठिनाई थी किताबें। हमारे काम के लायक़ किताबें हमें नहीं मिलीं, और अब भी नहीं मिल रही हैं। हमें या तो संस्कृत-निष्ठ हिन्दी की किताबें मिलीं या फ़ारसी लदी उर्दू की। बीच का रास्ता सूना ही पड़ा रहा। शुरू की रीडरों तक तो कोई बात न थी। हमारे प्रचारकों ने किसी तरह ़डरें लिख-लिखा लीं और उसी के ज़रिये हम काम चलाते रहे। ़गर दो क़दम चल लेने के बाद हमारी दिक़्क़त बढ़ी। और हम ़गों ने तय किया कि हम दोनों तरह की चीज़ें लोगों को ़ायेंगे। इसलिये शुरू से ही हमारी परीक्षाओं में 'पथिक' के ' 'अकबर के शेर', 'प्रेम-पंचमी' के साथ 'अलीबाबा और चालीस ' और 'गद्य-पद्य संग्रह' के साथ 'तिलस्माती मुंदरी' या 'हज़रत ़म्मद' चलते रहे।

इसके पहले हमने 'चुने हुए मज़मून' छापा था, जिसके छपे आज या कल दस साल हो जायेंगे। उसी सिलसिले में हम उर्दू की नयी शायरी का एक मजमुआ भी शाया करना चाहते थे। हम जामिया-मिल्लिया के जनाब हामिद अली ख़ाँ साहब से १९३८ इस बात का ज़िक्र किया और उन्होंने दिल्ली से निकलनेवाले 'तेज' के सब एडीटर श्री गोपीनाथ 'अमन' साहब से यह काम कर देने को कहा। 'अमन' साहब का यह 'चमन' गुज़श्ता चार साल से हमारे पास था मगर हम उसे कई वजहों से छाप न सके।

यह उर्दू के नये ज़माने की चीज़ है। मगर हमने अपने पढ़नेवालों की सहूलियत के वास्ते इसे तीन हिस्सों में बाँट दिया है। उन हिस्सों का और कोई मतलब नहीं है। इसके अलावा श्री प्रोफ़ेसर ताराचन्द साहब एम.ए., पी-एच.डी., श्री वर्मा 'मक़्फ़ी' साहब ने भी हमें इस काम में पूरी मदद पहुँचायी है—जिसके लिये 'सभा' उनकी बहुत-बहुत शुक्र-गुज़ार है। इस चमन को यह शकल देने में और इनका वसीअ नोट तैयार करने में हमारे प्रचारक पं. व्रजनन्दन शर्मा ने बहुत मेहनत की है।

हम उन शायरों का किन लफ़्ज़ों में शुक्रिया अदा करें, जिन्होंने अपनी प्यारी, मीठी शायरी इस जिल्द में शाया करने की इजाज़त हमें दी है! शायरी शायर की रूह और दिल का निच... है, उनके जज़्बात की बेहतरीन तस्वीर होती है। मगर शायर के दिल से

निकलकर शायरी शायर की नहीं रह जाती। कलियाँ मुस्कराती हैं और बादे-सबा वह मुस्कराहट लोगों को बाँट आती है; गुलाब अपना दिल खोलता है और नसीमे-सहर उसकी रूह को लेकर उड़ा आती है। उनको कौन रोके ? और रोकने का गुनाह ही कौन करे ? शायद उन गुलों को भी यही भाता है। फिर हम—जो कद्रदाँ हैं, मरहबा कहे बिना, आफ़रीं कहे बिना कैसे रह सकते हैं ? और इसके सिवा हम उन पर निछावर भी क्या कर सकते हैं ?

उम्मीद है लोगों को हमारी यह कोशिश पसन्द आयगी। इसमें कमियाँ रह गयी होंगी। मेहरबान दोस्त अगर उस तरफ़ इशारा करेंगे तो हम उनका एहसान मानेंगे।

—प्रकाशक

क्या ? कहाँ ?

उर्दू शायरी

जिस तरह यह कहना मुश्किल है कि उर्दू ज़बान कब बनी, उसी तरह यह बताना भी कठिन है कि उर्दू शायरी कब शुरू हुई। उर्दू शायरी की मशहूर तारीख़ 'आबे-हयात' में जो सन् १८८३ ई. में लिखी गयी—यह लिखा है कि उर्दू शायरी दक्खिन के वली नामक शायर ने शुरू की। मगर बाद की छान-बीन से पता चलता है कि उर्दू की शायरी इससे बहुत पुरानी है। वली तो मुहम्मदशाह रंगीले के समय में १८ वीं सदी के बीच में हुए। लेकिन जब दक्खिन में औरंगज़ेब के हमले पर हमले हो रहे थे उस ज़माने से कहीं पहले से उर्दू के कवि अपनी कविता के रचने में लगे हुए थे। इतना तो विश्वास के साथ कहा जा सकता है उर्दू शायरी दक्खिन से ही शुरू हुई। देहली ने उसे पाला-पोसा और लखनऊ में उसका सिंगार हुआ।

उर्दू कविता दक्खिन में कब शुरू हुई उसके बारे में अभी भी खोज हो रही है। सत्रहवीं सदी में उत्तरी हिन्दुस्तान में उर्दू का नया ज़माना शुरू होता है। इसका पहला दौर वह है जिसमें वली, मज़हर जानजाना और क़ायम जैसे शायर हुए।

उर्दू कविता का दूसरा दौर दर्द, मीर और सौदा का है। यह सब देहली के ही रहनेवाले थे और लगभग १८ वीं सदी के अन्त तक रहे। मीर और दर्द ग़ज़ल कहने में उस्ताद थे। मीर ने बहुत कुछ कहा है। दर्द का कलाम थोड़ा है, मगर ऊँचे दर्जे का है। इसमें तसव्वुफ़ भरा है। मीर और सौदा को देहली की हालत ख़राब होने के बाद लखनऊ जाना पड़ा। सौदा की तो नवाब साहब से कुछ अनबन हो गयी और वे लखनऊ वापस आये। मगर मीर उनके मरने तक लखनऊ में ही रहे। सौदा क़सीदे ज़्यादा

कहते थे, उनकी शायरी में फ़ारसी लफ़्ज़ों की भरमार है। मीर और दर्द ग़ज़ल कहते थे। उन्होंने, ख़ासकर मीर ने सीधी-सादी ज़बान इस्तेमाल की है। इसके वास्ते आज तक उर्दू शायरी उनकी एहसानमन्द है।

१८ वीं सदी के अन्त में देहली दरबार का रंग फीका पड़ने लगा और यहाँ के शायर लखनऊ जाने लगे। वहाँ शायरों की बड़ी क़द्र थी। मीर और सौदा का हाल हम ऊपर दे चुके हैं। उनके बाद इन्शा (इन्शा अल्ला ख़ाँ), मुस्हफ़ी और जुरअत का दौर आया। इसे हम तीसरा दौर कह सकते हैं। इसी ज़माने में सुलेमा शिकोह—जो देहली के शाहज़ादे थे—लखनऊ पहुँच गये। उनके दरबार में भी शायरों की बड़ी धूम रही। जैसे देहली में मीर और सौदा से मुक़ाबिला रहता था, यहाँ (लखनऊ में) मुस्हफ़ी और इन्शा का सामना हुआ। राजदरबार में इन्शा की इज़्ज़त ज़्यादा थी; मगर उन दिनों दरबार में इज़्ज़त बनते-बिगड़ते देर न लगती थी। कुछ ही दिनों बाद इन्शा की तरफ़ से नवाब साहब का रुख़ फिर गया और आख़िरकार वह सन् १८३३ ई. में पागल होकर मर गये। इसी ज़माने में मीर हसन ने उर्दू में एक मसनवी लिखी। यह एक पुराने ढंग की कहानी थी जिसमें परियों, देवों आदि का ज़िक्र था। किस्सा तो उस समय की पसन्द के मुताबिक दिलचस्प था, लेकिन शायरी की ज़बान इतनी मीठी थी कि उसकी ख़ूब तारीफ़ हुई। बहुत से लोगों की तो यहाँ तक राय है कि उर्दू में आज तक इतनी अच्छी मसनवी नहीं लिखी गयी। हाँ, पंडित दयाशंकर 'नसीम' की मसनवी 'गुलज़ारे-नसीम' भी इसके टक्कर की मानी जाती है। इसी समय देहली में शाह नसीर की बड़ी धूम थी। वह लखनऊ भी गये थे। उनकी ख़ास तारीफ़ यह थी कि वे मुश्किल रदीफ़ों और वज़नों में ग़ज़ल कहते थे। मगर भाव ऊँचे नहीं थे।

१८ वीं सदी गुज़र जाने के बाद उर्दू शायरी का चौथा दौर शुरू होता है। इस वक़्त देहली में शेख मुहम्मद इब्राहीम "ज़ौक़", मिर्ज़ा असदुल्ला ख़ाँ "ग़ालिब" और मोमिन ख़ाँ "मोमिन", उधर लखनऊ में ख़्वाजा हैदर

अली "आतिश" और शेख़ इमाम बख़्श 'नासिख़' का दौर-दौरा हुआ, 'आतिश' की शायरी में असर ज़्यादा था और 'नासिख़' में लफ़्फ़ाज़ी और अलंकार। 'आतिश' और 'नासिख़' में आपस में ख़ूब चोटें चलीं, मगर उतने बेतुकेपन के साथ नहीं जैसी 'मुसहफ़ी' और 'इंशा' में या सौदा और 'मीर' में चली थीं।

देहली में 'ज़ौक़' बादशाह 'ज़फ़र' के उस्ताद थे। दरबार में जितनी इज़्ज़त 'ज़ौक़' की थी उतनी 'ग़ालिब' की न थी। मगर दरबार में इज़्ज़त होना और बात है और आम लोगों की पसन्द और चीज़ है। दरबार के बाहर 'ग़ालिब' को 'ज़ौक़' के मुक़ाबिले में बहुत पसन्द किया गया। 'मोमिन' भी अपने ज़माने में ग़ज़ल के बादशाह थे। लेकिन जीते-जी उनकी ज़्यादा क़द्र नहीं हुई। ज़ौक़ राजकवि थे। इसलिये क़सीदे बहुत अच्छे कहते थे। ग़ालिब के ख़्याल बहुत गहरे और अछूते होते थे। उनसे पहले उर्दू में इतने ऊँचे ख़्यालवाला कोई पैदा नहीं हुआ। और बहुतों का ख़्याल है कि उनके बाद भी कोई उन तक नहीं पहुँच सका। ग़ालिब फ़ारसी के भी अच्छे शायर थे। उन्होंने अपने ख़तों में बहुत बार यह राय ज़ाहिर की थी कि मेरी शायरी की नफ़ासत देखना हो तो फ़ारसी में देखो। उर्दू मेरे लिए बेरंग चीज़ है। अगर आज ग़ालिब ज़िन्दा होते तो देखते कि उनका ख़्याल कितना ग़लत निकला। जिस फ़ारसी शायरी पर उनको नाज़ था उसको पढ़नेवाले आज बहुत थोड़े रह गये। और जो चीज़ उनके वास्ते बेरंग थी उसकी आज धूम है। क्या लखनऊ, क्या देहली, क्या पंजाब और क्या दक्खिन—हर जगह उनकी क़दर है। सच तो यह है कि जिस तरह हिन्दी में टैगोर की नकल करनेवाले बहुत-से अच्छे-बुरे कवि पैदा हो गये; वैसे ही ग़ालिब की नक़ल में बहुत से उर्दू कवि बिगड़ गये। विचार तो बहुत ऊँचा बाँधना चाहते हैं, लेकिन ग़ालिब की तरह ज़बान पर वह क़ूवत नहीं रखते इसलिये उनकी शायरी गोरखधंधा बन जाती है।

उर्दू कविता में मरसिये का स्थान बहुत ऊँचा है। मरसिया वह कविता

है जिसमें रंज और ग़म की दास्तान होती है; लेकिन ज़्यादातर यह शोक हज़रत इमाम हुसेन और उनके साथियों की शहादत के संबंध में होता है। एक तो वह घटना ही करुणाजनक है, दूसरे लखनऊ के शायरों ने उसका वर्णन भी कुछ इस ढँग से किया है कि ग़ैर-मुसलमानों की आँखों से भी बरबस आँसू टपक पड़ते हैं। सबसे अच्छा मरसिया कहनेवालों में मीर बबर अली 'अनीस' और मिर्ज़ा सलामत अली 'दबीर' गुज़रे हैं। उनसे पहले और बाद भी बहुत से मरसिया कहनेवाले हुए हैं लेकिन सबसे अधिक नाम इन्हीं दोनों का है। सच पूछा जाय तो इन्होंने उर्दू कविता को अदब की ऊँची चोटी पर बिठा दिया। ग़ज़ल कहनेवालों को यह कहाँ गवारा था कि उनका रंग फ़ीका पड़ जाय। उन्होंने मशहूर करना शुरू कर दिया कि बिगड़ा शायर मरसिया कहता है। लेकिन मरसिये की शायरी एक तो मज़हबी थी, दूसरे अनीस और दबीर ने वह ज़बान पायी जिसकी बदौलत मरसिए का रंग ज़्यादा जमा। लखनऊ, रामपुर और हैदराबाद में मरसिया कहनेवालों की क़द्र ग़ज़ल कहने वालों से ज़्यादा होने लगी। इन मरसियों में भाई-भाई का प्रेम, मियाँ-बीवी की मुहब्बत, पिता-पुत्र का स्नेह, ज़ालिम हाकिम और सत्याग्रही रिआया का मुक़ाबिला, धर्म के नाम पर मरनेवालों की वीरता, सुबह-शाम, दिन-रात, जंगल-बस्ती, रज़्म-बज़्म वग़ैरह के नज़ारे—सब कुछ मौजूद थे। यह ज़रूर था कि बातें अरब की थीं लेकिन उन्हें पेश किया गया हिन्दोस्तानी रंग में। लेकिन ऐसा तो हर मुल्क के शायरों ने किया है। 'अनीस' ने मामूली इंसानों को लेकर कभी कलम नहीं उठायी। वह कहते थे कि मेरा सच्चा बादशाह इमाम हुसेन है, मैं उसको छोड़कर और किसकी तारीफ़ कर सकता हूँ?

पुराने शायरों का ज़िक्र करते हुए हमने ज़्यादातर उन्हीं का वर्णन किया है जो या तो मुशायरों में ग़ज़लें पढ़ते थे या राजदर्बार में क़सीदे सुनाते थे, किस्से कहानियां नज़्म में कहते थे या धार्मिक मरसिये कहते थे। लेकिन इसी ज़माने में एक ऐसा शायर भी गुज़रा है जिसने ग़ज़लें बहुत कम कहीं,

क़सीदे भी नहीं कहे, किस्से-कहानियाँ भी अगर लिखीं तो बहुत लम्बी-चौड़ी नहीं ; जिसने ज़्यादातर कुदरत के नज़्ज़ारे बयान किये या अपने दिल के जज़्बात काग़ज़ पर उतारकर रख दिये। यह शायर मियाँ नज़ीर अकबराबादी थे। थे तो आप मुसलमान, लेकिन हिन्दुस्तानी कवितायें भी आपने बहुत अच्छी कीं। 'कृष्ण कन्हैया का बालपन' तो ऐसा लिखा है जैसा व्रजभाषा के भक्त कवि ने लिखा हो। बाज़ लोगों ने इन्हें उर्दू का शेक्सपियर माना है। हम इस बहस में न पड़ते हुए यह ज़रूर कहेंगे कि उस ज़माने में ऐसा कोई कवि नहीं था जिसने नज़ीर की तरह 'तिल के लड्डू', 'गिलहरी का बच्चा' 'ताजमहल का रौजा', 'भैरोंजी की तारीफ़', 'कृष्णजी का बालपन', 'हज़रत मुहम्मद की नात', 'बरसात की फुहारें' वग़ैरह रंग-बिरंग की शायरी की हो।

नया दौर

सन् १८५६ ई. में अवध का दरबार ख़तम हुआ। नवाब वाजिद-अली शाह क़ैद करके कलकत्ते भेज दिए गये और १८५७ में देहली के बादशाह बहादुरशाह तख़्त से उतार दिये गए। अंग्रेज़ी अमलदारी हुई;लोगों के ख़्यालात बदलने लगे। फिर शायरी में भी थोड़ा-बहुत उलट-फेर भी लाज़िमी था। मगर सवाल यह था कि पुराना ढर्रा छोड़कर नयी राह पर क़दम रखने की हिम्मत कौन करे। इसका सेहरा मौलाना मुहम्मद हुसेन 'आज़ाद' के सिर रहा जो 'ज़ौक़' के शागिर्द थे और 'ग़ालिब' के मशहूर शागिर्द ख़्वाज़ा अलताफ़ हुसैन 'हाली' के साथी थे। इन दोनों को अंग्रेज सरकार की तरफ़ से "शम्सुल उलेमा" (विद्वानों के सूर्य) का ख़िताब मिला। आम तौर से लोग हाली को ही नयी उर्दू शायरी का जन्मदाता मानते हैं। लेकिन मौलान मुहम्मद हुसैन 'आज़ाद' को भी इसका फ़ख़ हासिल है।

नयी शायरी का पहला 'मुनाज़मा' (मज़मून पर कविता करना) १८७४ ई. में 'आज़ाद' की कोशिश से, डाइरेक्टर तालीम पंजाब के इन्तज़ाम में लाहौर में हुआ। आपने उसके पहले ही नयी शायरी के बारे में अपनी

राय भी ज़ाहिर की थी। यह कम अचरज की बात नहीं है कि जिस तरह गद्य के प्रारंभ करने में एक अंग्रेज़ यानी जॉन गिलक्राइस्ट का हाथ था, उसी तरह उर्दू की नयी शायरी की शुरुआत में भी एक अंग्रेज़ कर्नल हौल राइट का हाथ था। उस मुनाज़िमे में मौ० आज़ाद ने उर्दू कविता के मौजूदा रूप रंग की ख़राबी बयान की और उसका रुख़ बदलने पर ज़ोर दिया। मुनाज़िमों का सिलसिला कुछ सालों तक ही रहा। कहने की ग़रज़ यह कि जैसे उर्दू शायरी दक्खिन से शुरू हुई उसी तरह इसकी नयी शायरी की बुनियाद पंजाब में पड़ी।

सन् १८९४ में हाली का दीवान छपा। यह दीवान पिछले दीवानों के रंग से क़तई अलग था। शायरी की रंगीनी तो इसमें कम थी; मगर मज़मून नये ढंग के थे। छिछोरेपन की बातें नहीं थीं। उस वक़्त कुछ लोगों ने इसे पसन्द और ज़्यादा लोगों ने नापसन्द किया। इसमें शायरी का चटख़ारा तो कम था ही। इसलिए जो लोग लफ़्ज़ों के उलट-फेर, जुमलों के बनाव-सिंगार, अलंकार की बारीकियों और कठिन समस्या पूर्ति को ही कविता समझते थे, उन्हें हाली की कविता फीकी जान पड़ी, और उन्होंने इसका मज़ाक उड़ाना शुरू किया। लेकिन ज्यों-ज्यों वक़्त गुज़रता गया, नयी पौद के लोगों को हाली की शायरी ज़्यादा पसन्द आती गयी। और आज हाली के ख़िलाफ़ आवाज़ उठानेवाले इने-गिने ही रह गये हैं। 'हाली' का जो दीवान छपा—उसकी शायरी से ज़्यादा लोगों ने उसका दीबाचा पसन्द किया। बाद में वह 'मुक़द्दमा शेरो शायरी' नाम से अलग ही छापा गया। उनमें हाली ने बड़े ही ज़ोरदार लफ़्ज़ों में पुरानी शायरी की नुक्ताचीनी की। कहा—वह शायरी हमारे देश और जाति की क्या भलाई कर सकती है जिसमें कोई सन्देश न हो, जो महज़ लफ़्ज़ों के हेर-फेर की शायरी हो। जिसे कोई बाप अपनी बेटी के सामने पढ़ने में हिचकिचाये—न पढ़ सके। हाली ने चेतावनी दी कि शायर ज़माने के बदलते हुए रंग को देखें, गुल व बुलबुल की कहानियों में और ज़ुल्फ़ व गेसू की उलझनों में न पड़े

रहें। यह चेतावनी ठीक समय पर दी गयी थी। उसका असर भी हुआ—मगर आहिस्ता, आहिस्ता। हाली ने लिखा—

'गुनहगार बच जायेंगे इससे सारे।
जहन्नुम को भर देंगे शायर हमारे॥'

यह उनके दिल से निकली हुई बात थी। हाली ने बड़े कड़े शब्दों में शायरों को झूठी खुशामद और विषय-लोलुपता से बचने की नसीहत दी। वे खुद पहले पुराने रंग में शायरी कहते थे। बाद को आपने वह रंग छोड़ा और छोड़ते वक़्त लिखा—

"बुल्बुल के चमन में हमज़बानी छोड़ी।
बज़्मे-शोअरा में शेरख़्वानी छोड़ी।
जब से दिले-नादां हमें छोड़ा तू ने;
हमने भी तेरी राम कहानी छोड़ी॥"

हाली के दीवान छपने के चार साल बाद पंजाब में एक मशहूर उर्दू के आलिम सर अब्दुल क़ादिर ने उर्दू के बारे में सन् १८९८ ई. में New School of Urdu Literature के नाम से अपने लेक्चरों का एक संग्रह छापा। इसी के कुछ साल पहले मौ. मुहम्मद हुसेन 'आज़ाद' ने उर्दू शायरों का तज़्किरा छापा जिसका नाम 'आबे हयात' था। यों तो इसके भी पहले उर्दू कवियों की जीवनी और उनके कलाम के नमूने बहुत कुछ छप चुके थे। लेकिन 'आज़ाद' ने यह किताब ऐसे ढंग से लिखी कि इसकी धूम मच गयी। 'आज़ाद' ने उर्दू कविता में हाली का-सा नाम तो नहीं पाया, मगर गद्य में इनका स्थान बहुत ऊँचा है। 'आबे हयात' के मानी हैं 'अमृत'। सचमुच इस किताब में बहुत मिठास है। गो कि इस विषय की और कई किताबें छप चुकी हैं, नयी खोजों के मुताबिक आबे हयात की कई बातें ग़लत भी साबित हो चुकी हैं, फिर भी जब तक उर्दू का साहित्य रहेगा—यह किताब ज़िन्दा

रहेगी। आज़ाद ने 'आबे हयात' में उर्दू शायरों से कहा कि तुम हिन्दी कवियों की ओर देखो, वह प्राकृतिक दृश्य और मन के भावों को कितनी ऊँचाई पर ले जाकर सुन्दरता से बांधते हैं। इस तरह उन्होंने एक नयी राह दिखायी।

उधर १९ वीं सदी ख़तम हो रही थी, इधर इक़बाल की शायरी पनप रही थी। इक़बाल की शायरी भी हाली की तरह पहले सर अब्दुल क़ादिर के उर्दू रिसाले 'मख़ज़न' में छपा करती थी। इस रिसाले और अंजुमन-हिमायतुल-इस्लाम की बदौलत इक़बाल की शोहरत फैलने लगी। शायरी के शुरू के ज़माने में इक़बाल राष्ट्रीयता की ओर झुके हुए थे। लेकिन २०वीं सदी के शुरू में उनका रंग बदला और वे इस्लाम और राष्ट्रीयता में बैर बताने लगे। यह कुछ भी हो मगर जहाँ तक इक़बाल की शायरी का ताल्लुक है; उन्होंने अपना अलग रंग क़ायम किया। उनका क़लाम हाली की तरह आसान नहीं था, लेकिन उसमें एक सन्देशा था। उन्होंने इस्लाम के कर्मयोग को बड़ी अच्छी तरह पेश किया।

पंजाब में जब यह सब हो रहा था, बाकी प्रान्त भी सूने नहीं थे। १८६७ ई. में मौ. मुहम्मद इस्माइल (यू. पी.) ने अंग्रेज़ी नज़्मों का तर्जुमा करके छापा। इस्माइल ने कुछ अतुकान्त कविता भी की। आपके अलावा अल्लामा क़ैफ़ी, अकबर इलाहाबादी, नज़्म तबातबाई और शरर लखनवी के नाम भी उल्लेखनीय हैं, जिन्होंने अतुकान्त कविताएँ कीं। मगर बच्चों के वास्ते मौ. मुहम्मद इस्माइल-सी नज़्में आज तक किसीने नहीं लिखीं। आप ही पहले शायर हैं, जिन्होंने देहात के सीन (Scene) अपनी शायरी में बांधे हैं और देहात के जीवन की झलक दिखायी है।

अकबर इलाहाबादी ने हास्यरस में कविता की। मगर आपके मज़ाक और तर्ज़ में एक छिपा हुआ संदेशा था। वे इंशा की तरह महज़ हँसने-हँसाने के वास्ते नहीं लिखते थे। बल्कि यों कहना चाहिए कि यह हँसाने के बजाय रुलाने के वास्ते शायरी करते थे। हाली और अकबर दोनों ही नये ढंग के शायर थे। मगर दोनों में पूरब और पच्छिम का फ़रक था। हाली सर

दि अहमद के हामी थे; मुसलमानों को उसी राह पर लाना चाहते थे। मगर अकबर सर सैयद की रविश के बहुत ख़िलाफ़ थे और कहीं कहीं तो उन्होंने उनका मज़ाक भी उड़ाया है। यों तो अकबर ने पुराने ज़माने के बाबू और रईस और नई रोशनी के जेंटिलमैन—दोनों पर फ़ब्तियाँ कसी हैं। मगर नये रंगवालों को तीखे-तीर मारे हैं। इसमें शक नहीं कि अकबर ने एक नया रास्ता निकाला। बहुतों ने उनकी राह पर चलने की कोशिश की, मगर कामयाबी किसी को उतनी हासिल नहीं हुई। अकबर ज़बान के नहीं, ख़्यालात के मुसव्विर थे, इसलिये नज़्म के कायदे-क़ानूनों की उन्होंने ज़्यादा परवाह नहीं की है। आज भी अकबर के शेर लोगों की ज़बानों से लगे फिरते हैं।

शिबली उर्दू में अपनी शायरी के मुकाबिले नस्र में ज़्यादा मशहूर हुए। शायद उर्दू में आप ही पहले शायर हैं जिन्होंने राजनीति को लेकर शायरी की है, गो उन्हें पूरा राष्ट्रीय शायर कहना मुश्किल है। शिबली का मिशन हाली और अकबर के बीच का था।

इस सिलसिले में अगर रामपुर के नवाब कल्बे अलीख़ाँ का ज़िक्र न किया जाय—जो ख़ुद एक शायर थे—तो यह हिस्सा अधूरा रह जायगा। 'तस्लीम' लखनवी, अमीर 'मीनाई', 'मुनीर' शिकोहाबादी, 'बहर' लखनवी वग़ैरह शायरों को रामपुर दरबार से बहुत मदद मिली।

मगर नये रंग की शायरी की तरक़्क़ी जिस रियासत में हुई वह दक्खिन की मशहूर रियासत हैदराबाद है। जैसे देहली के उजड़ने के बाद लखनऊ में उर्दू शायरी की धूम मची, वैसे ही लखनऊ में नवाबी का तख़्ता उलटने के बाद हैदराबाद में उर्दू शायरी का ज़ोर बंधा। देहली के अंतिम बादशाह बहादुरशाह 'ज़फ़र' के उस्ताद शेख़ मुहम्मद इब्राहीम को रियासत हैदराबाद के दीवान राजा चंदूलाल ने बुलाया था। लेकिन वह नहीं गये। उनकी एक ग़ज़ल का मकता है—

"गरचे इन रोज़ों दकिन में है बहुत क़द्रे सुख़न;
कौन जाए 'ज़ौक़' पर दिल्ली की गलियाँ छोड़कर।"

'ज़ौक़' तो दिल्ली की गलियाँ छोड़कर दक्खिन नहीं गये। मगर उनके मशहूर शागिर्द नवाब मिर्ज़ाख़ाँ 'दाग़' वहाँ पहुँचे और पहुँचते ही उनकी किस्मत खुल गयी। यहाँ से ग़रीबी हालत में गये थे और वहाँ मालामाल हो गये। मीर महबूब अलीख़ाँ निज़ाम हैदराबाद ने उनकी ख़ूब क़द्र की, इनाम-एकराम दिये। भारी तनख़्वाह मुक़र्रर की। 'फ़सीहुल मुल्क' का खिताब दिया। मगर दाग़ का ज़िक्र हमारे इस तज़्किरे के बाहर है। हाँ, उनके शागिर्दों में नये रंग का सब से मशहूर शायर इक़बाल हुआ।

दाग़ के पहुँचने के कुछ समय बाद ही हैदराबाद में लखनऊ का एक ऐसा शायर पहुँचा, जिसने उर्दू में नया रंग लाने में बड़ी मदद की। हमारी मुराद मुंशी अमीर अहमद 'मीनाई' या पं. रतननाथ 'सरशार' से नहीं, बल्कि अली हैदर नज़्म तबातबाई से है।

तबातबाई पैदा तो लखनऊ में हुए थे, जहां उन्होंने मुंशी मेंडू लाल 'ज़ार' से तालीम पायी थी। परन्तु उनकी शायरी कलकत्ते से मशहूर होना शुरू हुई, जहां वह वाज़िदअली शाह के लड़के को पढ़ाते थे। वाज़िद अली-शाह के मरने के बाद उन्होंने हैदराबाद का रुख़ किया। अब तक पुराने रंग की कविता करते थे, लेकिन हैदराबाद आने के बाद नया रास्ता पकड़ा। अंग्रेज़ी नज़्मों का सुन्दर तर्जुमा किया, जिनमें Grey's Elegy का 'गोरे गरेबां'—बहुत मशहूर है। अंग्रेज़ी नज़्मों के तर्जुमों में इस्माइल मेरठी, 'सरूर' जहानाबादी, तिलोकचन्द 'महरूम' और मुन्शी महाराज बहादुर 'बर्क़' ने अच्छी कामयाबी हासिल की।

आला हज़रत मीर महबूब अली खां निज़ाम हैदराबाद और महाराजा सर किशनप्रसाद 'शाद' ने शायरों की ऐसी क़द्र की कि बीसवीं सदी के शुरू होने के पहले ही हैदराबाद उर्दू कवियों का ख़ासा मरक़ज़ बन गया। आज-

कल के निज़ाम मीर उस्मान अली ख़ाँ भी शायरों की क़द्र करते हैं। उनके उस्ताद 'जलील' हैं। लेकिन वे पुराने रंग में कहते हैं। नये ढंग की ग़ज़लें कहनेवाले 'फ़ानी' बदायूनी भी हैदराबाद में ही रहते हैं। २० वीं सदी में जो मशहूर शायर हैदराबाद पहुँचे उनमें 'जोश' मलीहाबादी, 'आज़ाद' अन्सारी और 'यास' अज़ीमाबादी उल्लेखनीय हैं। आज़ाद अन्सारी 'हाली' के शागिर्द हैं। सन् ३६ में हैदराबाद छोड़कर देहली चले आये। 'जोश' भी देहली आकर रहने लगे। 'यास' जो अब 'यगाना' लखनवी तखल्लुस करते हैं, अब भी हैदराबाद ही में हैं। बाहर से हैदराबाद आनेवाले नये रंग के शायरों में 'सलीम' पानीपती और बेनज़ीरशाह का नाम लेना भी ज़रूरी है।

यह तो बाहर से हैदराबाद आनेवालों का ज़िक्र रहा। ख़ुद हैदराबाद में भी अच्छे-अच्छे शायर पैदा हुए। पिछली सदी में 'कैफ़ी' हैदराबादी मशहूर शायर हुए हैं। यों मुन्शी अज़मतुल्ला खाँ को भी हैदराबाद का ही शायर मानना चाहिए। क्योंकि पाँच साल की उम्र में ही आप देहली से हैदराबाद चले आये। इनका कलाम थोड़ा है, मगर अपने रंग का अनोखा है, कई कवितायें हिन्दी छन्द में लिखी हैं। ज़बान हिन्दोस्तानी है। दुख है कि इनकी मौत अधेड़ उम्र में ही हो गयी। आजकल 'अमजद' का नाम भी मशहूर है। ये हैदराबाद के किसी सरकारी महकमे में काम करते हैं। रुबाइयां अच्छी कहते हैं। कलाम दर्द से भरा होता है।

पंजाब के 'हफ़ीज़' जालन्धरी, यू. पी. के 'साग़र' निज़ामी,' 'बिस्मिल' इलाहाबादी व 'बहज़ाद' लखनवी के कविता पढ़ने की बड़ी धूम है। नये ढंग की ग़ज़लें कहने में हसरत मोहानी, 'जिगर' मुरादाबादी, 'असगर' और 'फ़ानी' बदायूँनी बहुत मशहूर हैं। मौलाना हाली, ब्रजनारायण 'चकबस्त', लालचन्द 'फ़लक' की कवितायें राष्ट्रीय रंग में रंगी हुई हैं।

ग़ालिब के ज़माने में फ़ारसी के बहुत ज़्यादा लफ़्ज़ शायरी म इस्तेमाल होने लगे थे। 'दाग़' ने इस रविश को रोका। हाली ने इसमें इसलाह

दी और हिन्दी शब्द इस्तेमाल किये। मौ० मुहम्मद इस्माइल ने भी इस तरफ़ बड़ा काम किया। आजकल के शायरों में अल्लामा कैफ़ी, हफ़ीज़ जालन्धरी, सागर निज़ामी, 'सईद' बरेलवी, और 'वासित' बिस्वानी वग़ैरह शायर हिन्दी के शब्द ख़ूबी और बहुतायत से इस्तेमाल करते हैं। इन्हीं लोगों ने उर्दू शायरी को—जो दरबारों में पैदा हुई थी—हिन्दुस्तान की ज़मीन में ला खड़ा किया है। इसके पहले ही 'आज़ाद', 'हाली' 'बर्क़', इस्माइल मेरठी, और मौ० अज़मतुल्ला ख़ाँ वग़ैरह ने वह रास्ता साफ़ किया था इसमें शक नहीं।

अंग्रेज़ी के अलावा संस्कृत से भी काफ़ी पुस्तकों के तर्जुमे उर्दू शायरी में हुए हैं। भगवद्गीता, महाभारत, रामायण, कलिदास की कवितायें, कबीर के दोहों के अनुवाद मशहूर हैं।

तमाम बातें देखकर यह मालूम होता है कि उर्दू कविता का भविष्य अच्छा है। 'हाली' और 'आज़ाद' ने उसे जिस डगर पर लगा दिया, वहाँ से उसे अपनी मंज़िल नज़र आती है। मगर अब भी पुराने रंग के कहनेवाले ही ज़्यादा हैं। वे मुशायरे करके अपनी तबियत ख़ुश कर लेते हैं। उर्दू के साप्ताहिक और माहवार रिसालों में भी अभी तक पुराना रंग ही ज़्यादा जगह घेरता है। उर्दू में प्रेम-रस ज़्यादा है, वीर रस-की कुछ झलक मिलती है। पुरानी कविता में—ख़ासकर मरसिये में वीर-रस की कुछ कमी है। आजकल राष्ट्रीय कविताओं में वीर-रस पाया जाता है। भक्ति और वैराग्य रुबाइयों में मिलता है। वेदान्त कहनेवालों में स्वर्गीय मुंशी सूरजनारायण 'मेहर' व पं. अमरनाथ 'साहिर'अपना जवाब नहीं रखते।

पुराने ढंग के शायर शायरी के क़ायदे-क़ानून की पाबन्दी ज़्यादा करते थे। आज के शायर इन बातों का उतना ख़्याल नहीं रखते। अगर शायरी की रूह ख़्यालात है तो ज़रूर उर्दू शायरी आगे बढ़ रही है। इश्क़िया शायरी का रंग अब फीका पड़ता जा रहा है। इक़बाल की बदौलत कर्मयोग का जो फ़लसफ़ा रायज़ हुआ अब वह ग़ज़लों में भी आने लगा है। इस रंग

के और भी गहरा होने की उम्मीद की जा रही है। हिन्दी की तरह उर्दू में छायावाद या रहस्यवाद का असर नहीं आया।

देश की जगार का असर उर्दू कविता पर भी पड़े बिना नहीं रह सका है। सन् १९२१ ई. के असहयोग आन्दोलन से इस तरह की शायरी को बड़ी मदद मिली। जो लोग यह मानते हैं कि कला को मुफ़ीद भी होना चाहिए उन्हें ऐसी शायरी से बहुत कुछ उम्मीद है। ऐसी कविता एक ज़बान में हो तो दूसरी पर भी असर डालती है। जैसे मुसद्दसे-हाली के बाद उसी रंग में मैथिलीशरण गुप्त ने हिन्दी में 'भारत-भारती' लिखी। जैसे-जैसे यह रंग गहरा चढ़ता जायगा वैसे-वैसे इश्किया-रस कम होता जायगा। और सच तो यह है कि हिन्दुस्तान जैसे गुलाम देश के वास्ते ऐसी शायरी की ज़रूरत है जो इस मुल्क और क़ौम को आगे बढ़ाये। उर्दू की शायरी में इसके चिह्न नज़र आ रहे हैं।

यह दीबाचा यहाँ खतम होने पर भी खतम नहीं होगा, जब तक कि हम पढ़नेवालों को उर्दू शायरी की किस्मों कि मामूली जानकारी न करा दें।

ग़ज़ल—यह अरबी ज़बान का लफ़्ज़ है। उसके मानी हैं औरतों से बातें करना। इसमें कई शेर होते हैं। हर शेर का मज़मून अलग-अलग होता है। प्रायः नौ या ग्यारह शेर होते हैं। पहले शेर को मतला कहते हैं—जिसके मानी हैं—उदय-स्थान। आखिरी शेर को—जिसमें शायर का तख़ल्लुस होता हैं—मकता कहते हैं। मकता के मानी हैं—काट देना। ग़ज़ल के शेर प्रायः इश्किया होते हैं। नमूना नीचे दिया जाता है—

ग़ज़ल—

कोई सूरत नज़र नहीं आती, कोई तदबीर बर नहीं आती,
मौत का एक दिन मुकर्रर है, नींद क्यों रात भर नहीं आती।
पहले आती थी हाले दिल पर हँसी, अब किसी हाल पर नहीं आती,

हम वहाँ हैं जहाँ से हमको भी, कुछ हमारी ख़बर नहीं आती।
यों ही कुछ बात है कि मैं चुप हूँ, वरना क्या बात कर नहीं आती;
जानता हूँ सबाब ताअतो ज़ुहद, पर तबीयत इधर नहीं आती।
काबे किस मुँह से जाओगे 'ग़ालिब', शर्म तुमको मगर नहीं आती॥

शेर—शेर दो मिसरों (चरनों) का होता है। अगर दोनों मिसरों के आख़िर का लफ़्ज़ क़ाफ़ियादार (तुक के साथ) न हो तो उसे शेर कहते हैं। अगर क़ाफ़ियादार हो तो 'बैत' कहते हैं। दो शेर के मिलने से 'रुबाई' बनती है। रुबाई का पहला, दूसरा, व चौथा मिसरा क़ाफ़ियादार होता है।

शेर—

"देखने से शौक़ पैदा; शौक़ से पैदा तलब।
आफ़ते-दिल आँख थी; दिल आफ़ते-जाँ हो गया।"

—'अकबर'

बैत—

"दिल मेरा जिससे बहलता, कोई ऐसा न मिला।
बुत के बन्दे मिले; अल्लाह का बन्दा न मिला।"

—'अकबर'

रुबाई—

"जहाँ ने साज़ बदला; साज़ ने नग़मों की गत बदली,
गतों ने रंग बदला; रंग ने यारों की मत बदली।
फ़लक ने दौर बदला; दौर ने इंसान को बदला,
गये हम तुम बदल; क़ानून बदला, सल्तनत बदली॥"

—'अकबर'

क़ता—यह भी चार मिसरों का होता है। लेकिन इसमें दूसरा और चौथा मिसरा क़ाफ़ियादार होता है—

"क़लाम ऐसा अक्सर सुना होगा तुमने,
सुना आज और कल असर दिल से उतरा।
मगर शेर ऐसा जो हो तेज़ नश्तर,
इधर मुँह से निकला, उधर दिल में उतरा॥"

—'अमजद'

क़ता दो शेरों से ज़्यादा भी हो सकता है, लेकिन मतलब सिल-सिलेवार होता है।

क़सीदा—देखने में क़सीदे का रूप ग़ज़ल का ही सा होता है; लेकिन इसका मज़मून सिलसिले से होता है और ज़बान ज़्यादा मुश्किल होती है। फ़ारसी, अरबी के लफ़्ज़ क़सरत से आते हैं। आम तौर पर क़सीदे में किसी की तारीफ़ होती है। इसमें ग़ज़ल से बहुत ज़्यादा शेर होते हैं। क़सीदे राज-दरबारों में पढ़े जाते थे।

मुख़म्मस—ख़म्स अरबी में पाँच को कहते हैं। इसमें पाँच मिसरों का एक बन्द होता है। कई बन्द मिलकर एक मुख़म्मस होता है। हर बन्द के पहले चार मिसरों का क़ाफ़िया एक होता है। और सब बन्दों के पाँचवें मिसरों का क़ाफ़िया एक होता है।

मुख़म्मस—

देखा जो रंग-ढंग गुलिस्ताँ का कुछ नया,
दीवानी हो गयी है, नहीं होश है ज़रा;
हर गुल पै लोट-पोट हुई जाती है सबा,

गुलशन ने बाँध रखी है उल्फ़त की वह दवा।
मस्तानावार फिरती है बे-अख़्तियार आज ॥

—'ज़ब्त' रामपुरी

मुसद्दस—मुसद्दस (षट्पदी) में तीन-तीन शेरों का एक बन्द होता है। कई बन्द मिलकर मुसद्दस होता है। हर बन्द में पहले चार मिसरे का क़ाफ़िया एक होता है और पाँचवें और छठे मिस्रे का क़ाफ़िया अलग होता है। मरसिये मुसद्दस में ही लिखे जाते हैं। हाली, शिबली, चकबस्त के मुसद्दस बहुत मशहूर हैं।

मुसद्दस—

"यह दाग़ वह नहीं, मिट जाए जो मिटाने से;
यह दर्द वह नहीं, दब जाए जो दबाने से।
यह आग वह नहीं, बुझ जाए जो बुझाने से;
चिता जलाई तो उनसर लगे ठिकाने से।
अगिन अगिन में मिली, जल में जल, हुए सब पाक;
हवा हवा में, ख़ला में ख़ला, व ख़ाक में ख़ाक ॥"

—'रअना' कश्मीरी

मसनवी—इसमें जितने शेर होते हैं, उनके दोनों मिसरों का तुक मिलता है। मगर एक शेर का तुक दूसरे से नहीं मिलता। मसनवियों में अक्सर कोई कहानी कही जाती है। कहानी बड़ी हुई तो मसनवी में सैकड़ों हज़ारों शेर होते हैं। मसनवी के शेर इस तरह होते हैं।

"है, है! मेरा फूल ले गया कौन,
है, है! मुझे दाग़ दे गया कौन?

सम्बुल मेरा ताज़ियाना लाना,
शमसाद इसे सूली पर चढ़ाना।
शबनम के सिवा चुरानेवाला,
ऊपर से था कौन आनेवाला।
गुलचीं का जो हाथ उस पर टूटा,
गुंचों के भी मुँह से कुछ न फूटा।
जिस हाथ में गुल हो, दाग़ हो जाए,
जिस घर में हो गुल, चिराग़ हो जाए।

—'गुलज़ारे नसीम'

इसके अलावा भी मुसल्लस, मुरब्बा, तरकीब बन्द, तरजीअ बन्द वग़ैरह कई किस्में हैं। लेकिन वह ज़्यादा रायज़ नहीं हैं। आजकल नये नये ढंग भी चले हैं—जिनको कोई नाम नहीं दिया जा सकता। हाँ, इतना कहा जा सकता है कि वे हिन्दी और अंग्रेज़ी के छन्दों से मिलते-जुलते हैं।

शायरों का परिचय

मौलाना मुहम्मद हुसैन 'आज़ाद'

मौलाना मुहम्मद हुसैन 'आज़ाद' सन् १८२० ई. में देहली में पैदा हुए। इनके पिता का नाम बाक़र अली था। शायरी में इनके उस्ताद शेख़ मुहम्मद इब्राहीम 'ज़ौक़' थे, जो देहली के आख़िरी बादशाह बहादुर-शाह 'ज़फ़र' के भी उस्ताद थे। 'आज़ाद' के साथ पढ़नेवालों में हाफ़िज़ नज़ीर अहमद और मास्टर प्यारेलाल 'आशोब' का नाम ख़ास तौर पर ज़िक्र के क़ाबिल है। मास्टर प्यारेलाल की ही कोशिश से 'आज़ाद' लाहौर पहुँचे, जहाँ इनका नाम हुआ। आज़ाद ग़दर के पहले लखनऊ भी गये थे; मगर वहां इनका कोई ठिकाना न लगा। लाहौर में मास्टर प्यारेलाल ने आज़ाद की मुलाक़ात मेजर फुलर से करा दी, जो तालीम के महक़मे के डाइ-रेक्टर थे। आज़ाद ने लाहौर के तालीमी महक़मे में नौकर होने के बाद उर्दू, फ़ारसी में कोर्स की नयी किताबें लिखीं, जो बहुत पसन्द की गयीं और बहुत दिनों चलीं।

लाहौर में आज़ाद ने अंजुमन क़ायम की और इसी के ज़रिये नयी शायरी का प्रचार किया। सन् १८६७ में इस पर पहला लेक्चर दिया और १८७४ में पहिला मुनाज़िमा (बैठक) कराया, जिसमें समस्या-पूर्ति की जगह विषय-पूर्ति रखी गयी थी। इस मुनाज़िमे का बहुत कुछ श्रेय कर्नेल होलराइड को है जो उस समय तालीम के डाइरेक्टर थे।

सन् १८८३ ई. में आज़ाद को सरकार की तरफ़ से ईरान भेजा गया, जहाँ से वह नयी फ़ारसी में निपुण बनकर आये। फिर आप उर्दू-फ़ारसी के प्रोफ़ेसर मुक़र्रर हो गये। 'अतालीक़ पंजाब' नाम के अख़बार के सब-एडीटर

भी रहे, जिसके एडीटर मास्टर प्यारेलाल थे। 'पंजाब मैगज़ीन' के भी एडीटर रहे। १८८७ ई. में महारानी विक्टोरिया की जुबली हुई तो इनको 'शम्सुल उलेमा' का ख़िताब मिला।

कुछ दिनों बाद 'आज़ाद' की प्यारी बेटी मर गयीं, जिनको आज़ाद ने बहुत प्यार से पाला व लिखाया-पढ़ाया था। इस रंज का असर 'आज़ाद' पर बहुत पड़ा और धीरे-धीरे उनका दिमाग़ ख़राब हो गया। २० साल तक इसी हालत में रहने के बाद १९१० में इनकी मौत हो गयी।

नयी शायरी की इमारत बनाने का फ़ख़्र मौलाना हाली को है और उसकी नींव रखने का सेहरा आज़ाद के सिर है। उर्दू गद्य भी आज़ाद ने ख़ूब लिखा था।

ख़्वाजा अल्ताफ़ हुसैन साहब 'हाली' पानीपती

ख़्वाजा अल्ताफ़ हुसैन हाली सन् १८३७ ई. में पानीपत में पैदा हुए। वालिद का नाम ख़्वाजा मलिक अली था। बाप-माँ इनके छुटपन में ही चल बसे थे। इनकी परवरिश इनके बड़े भाई ख़्वाजा इमदाद हुसैन ने की। १७ साल की उमर में आपकी शादी हो गयी, मगर पढ़ने का शौक़ नहीं छूटा। देहली में ससुराल थी। वहीं दो साल तक पढ़ा। १९ बरस की उम्र में हिसार की कचहरी में नौकर हो गये। शायरी का शौक़ तो पहले ही से था। देहली में 'ग़ालिब' से इस्लाह लेते थे। कुछ दिनों बाद जहाँगीराबाद में नवाब मुस्तफ़ा ख़ाँ 'शेफ़ता' के लड़कों को पढ़ाने गये। आठ साल तक यहीं रहे और 'शेफ़ता' साहब से इस्लाह लेते रहे। फिर लाहौर के सरकारी बुक-डिपो में नौकर हो गये। यहीं से इनकी शायरी चमकना शुरू हुई। यहाँ आप अंग्रेज़ी से तर्जुमा की हुई किताबों का प्रूफ़ पढ़ते थे। अब तक पुराने रंग की शायरी करते थे; पर अब नये रंग की चाट लग गयी और लाहौर में ही इन्होंने 'बरखा,' 'उम्मेद', 'हुब्बे-वतन' आदि अपनी मशहूर कवितायें लिखीं। लाहौर से बदलकर आप देहली के

ऐंग्लो-अरबिक कालेज में नौकर हो गये। यहीं पर इनकी मुलाक़ात सय्यद अहमद से हुई; और इसके बाद आपने मुसलमानों की हालत पर कविता लिखी जो 'मुसद्दसे-हाली' के नाम से मशहूर है। इन्होंने गद्य में भी बहुत बढ़िया किताबें लिखी हैं, जिनमें 'मुकद्दमा शैर व शायरी' सबसे मशहूर है। इसमें आपने शायरों को नये रंग की शायरी करने और पुराने रंग को छोड़ने की वक़ालत की है।

आख़िरी ज़माने में हाली को हैदराबाद रियासत से १००) महीना मिलने लगा था और उन्होंने नौकरी छोड़ दी थी। सरकार की तरफ़ से आपको 'शम्सुल उलेमा' (विद्वानों में सूर्य) का ख़िताब मिला। ३१ दिसंबर १९१४ में आपका इन्तकाल हो गया।

आपने नये रंग की शायरी को सबसे ज़्यादा रायज़ किया।

ख़ानबहादुर अकबर हुसैन 'अकबर' इलाहाबादी

'अकबर' इलाहाबादी सन्. १८४६ ई. में पैदा हुए। इनके दादा सैय्यद फ़ज़ल मुहम्मद लखनऊ के मशहूर मौलवी थे। इनके पिता सैय्यद तफ़ज़्ज़ल हुसैन भी अच्छे आलिम थे; आख़िरी उम्र में आप फ़कीर हो गए। इसलिए घर की माली हालत अच्छी न थी। नतीजा यह हुआ कि अरबी-फ़ारसी की मामूली तालीम के बाद ही १५ साल की उम्र में अकबर को नौकरी कर लेना पड़ी। आप सन् १८६४ में ईस्ट इंडिया कम्पनी के पब्लिक वर्क्स में नौकर हुए। १८६६ में मुख़्तारी का इम्तहान पास किया। तीन साल बाद नायब तहसीलदार हो गये। मगर यह नौकरी भी छोड़ दी और इम्तहान देकर वकील बन गये। कुछ दिन वकालत करने के बाद मुन्सिफ़ हो गये और तरक़्क़ी करते-करते जज हो गये। सन् १९०३ में इस ओहदे से इस्तीफ़ा दे दिया।

सन् १९०८ में इनकी कविताओं का पहला संग्रह प्रकाशित हुआ। वक़्त के लिहाज़ से इनकी शायरी चार हिस्सों में तक़सीम हो सकती है।

पहले तो यह और उर्दू शायरों की तरह पुराने ढंग में ग़ज़लें वगैरह कहते रहे। फिर नया रंग पकड़ा और इनकी ग़ज़लों में कुछ नया और कुछ पुराना रंग नज़र आने लगा। फिर यह बिलकुल नये रंग में कहने लगे। आख़िरी हिस्से में तो निराशावाद पैदा हो गया था।

अकबर उर्दू में और शायद हिन्दुस्तान के कवियों में हास्यरस में बेजोड़ हैं। उनके हास्य में एक संदेशा पाया जाता है। वह जब फब्तियाँ कसने पर आते हैं तो फिर किसी को नहीं छोड़ते। हिन्दू हो या मुसलमान, सरकार हो या क़ौमी लीडर, बेटा हो या बहू, सब का मज़ाक़ उड़ाया है। कहीं-कहीं तो वे सीमा से बाहर भी पहुँच गये हैं।

सन् १९२१ ई. में आपका देहान्त हो गया।

अल्लामा शिब्ली नुमानी

अल्लामा शिब्ली सन् १८५७ ई. पैदा हुए, जो भारत की तारीख़ में बड़े उथल-पुथल का साल था। इनकी तबीयत की कुदरती रुझान तो फ़ारसी शायरी की तरफ़ थी, मगर हाली के असर से इन्होंने उर्दू कविता करना शुरू की। पिछली सदी में उर्दू के जो दो-चार ज़बर्दस्त पाये हुए हैं उनमें शिब्ली भी एक थे। लेकिन इनका नाम उर्दू कविता से ज़्यादा गद्य लिखने में मशहूर हुआ। उर्दू में सबसे पहले पोलिटिकल रंग की शायरी लिखने का सेहरा अल्लामा शिब्ली के ही सिर है।

शिब्ली ज़िला आज़मगढ़ के एक गाँव में पैदा हुए। इनके पिता का नाम शेख़ हबीबुल्ला था और वह आज़मगढ़ में वकालत करते थे। उनकी वकालत ख़ूब चलती थी। शिब्ली को शुरू से ही पढ़ने-लिखने का बेहद शौक़ था। पहले घर पर पढ़ते रहे, फिर लाहौर गये और वहाँ फ़ारसी-अरबी पढ़ी। १९ साल की उम्र में हज को गये। हज से लौटकर पहले वकालत की फिर सरकारी नौकरी करने लगे। सन् १८८२ ई. में अपने छोटे भाई मेहदी अली से मिलने के लिये अलीगढ़ गये तो वहीं सर सैयद अहमद ख़ाँ से मुलाक़ात

हुई और वह वहाँ कालेज में प्रोफ़ेसर हो गये। सर सैय्यद के ज़ोर देने पर कालेज के आहाते में ही रहने लगे। यहीं से उन्होंने प्रो. आर्नाल्ड के साथ इस्लामी देशों का दौरा किया। तुर्की में उन्हें सरकार की ओर से एक तमग़ा मिला था। सन् १८९८ में सर सैय्यद के मरने के बाद अलीगढ़ से जी उचट गया। तब नवाब सर वक़ारुल उमरा ने उन्हें हैदराबाद बुला लिया और शिब्ली वहाँ चार साल तक साहित्यिक काम करते रहे। १८९४ में शिबली ने 'नदवा' नाम की शिक्षा-संस्था मुसलमानों के वास्ते क़ायम की। उर्दू साहित्य की सेवा के लिए उन्होंने आज़मगढ़ में "दारुल मुसन्नफ़ीन" (लेखक-संघ) क़ायम किया। यह दोनों संस्थाएँ अब भी काम कर रही हैं।

सन् १९१४ ई. में—जिस साल हाली इन्तकाल कर गये—शिब्ली भी इस दुनियाँ से कूच कर गये।

महाराजा सर किशन प्रसाद 'शाद'

महाराजा सर किशन प्रसाद (कृष्ण प्रसाद) 'शाद' सन् १८६२ में पैदा हुए। इनके नाना चंदू लाल साहब 'शादां' भी मशहूर शायर थे। कवियों और साहित्यिकों का बहुत मान व इज्ज़त करते थे। इन्हीं की बदौलत हैदराबाद दक्खिन में उर्दू कविता का इतना चर्चा बढ़ा। महाराज सर किशन प्रसाद के पिता का नाम राजा हरि किशन प्रसाद था। ये जाति के सूर्य वंशी खत्री हैं। शायरी में मीर महबूब अली ख़ाँ आसफ़ निज़ाम हैदराबाद के शागिर्द हैं। महाराजा साहब बहुत दिनों तक हैदराबाद रियासत के प्रधान मंत्री रहने के बाद १९२६ में, उम्र ज़्यादा हो जाने की वजह अपने ओहदे से रिटायर हो गये हैं। आप सूफ़ी मत को बहुत पसन्द करते हैं। आप ख़ुद मशहूर शायर ही नहीं हैं, बल्कि बहुत से मशहूर कवियों की परवरिश भी करते हैं। पिछले कवियों में सरशार, अमीर, और दाग़ की इन्होंने ख़ूब क़द्र की। आजकल भी कई शायर आपके दरबार से फ़ायदा उठा रहे हैं। महाराजा साहब की शायरी हर रंग में पायी जाती है। नज़्म और नस्र दोनों में

आपकी किताबें हैं। बाग़े-शाद; मज़मूए-रुबाइयाते-शाद; मज़मूए-मुनाजात; ज्ञानदर्पण; मस्नवी-आईनए-वहदत; ग़ुबारे-शाद; नारअए-मस्ताना वग़ैरह बहुत मशहूर हैं। फ़ारसी और उर्दू दोनों में आपने शायरी की है।

महाराजा साहब तबीयत के बहुत सादा और सरल हैं। आपको हिज़ एक्स्लेन्सी, राजए-राजगान, महाराजा, सर, अमीन-उल-सल्तनत, जी. सी. एस. आई., वग़ैरह के ख़िताब मिले हैं।

सय्यद मुहम्मद बेनज़ीर शाह

आप १८६३ ई. में इलाहाबाद ज़िला के कड़ा-मानिकपुर में पैदा हुए। इनके वालिद मौलाना शाह एहसान अली क़ादिरी बड़े मशहूर मौलवी थे। बेनज़ीर शाह को ख़ास तौर पर अरबी और फ़ारसी की तालीम दी गयी। ग़ज़ल में वजहउल्ला इलाहाबादी से और मस्नवी में मुन्शी अमीर मीनाई से इस्लाह लेते थे। जवानी से ही हैदराबाद में रहने लगे। इनकी मस्नवी 'अलकलाम' बहुत मशहूर है। आपने ग़ज़लें भी अच्छी कही हैं। प्राकृतिक दृश्यों का वर्णन आपने बहुत अच्छा किया है। इनका देहान्त हाल ही में हुआ। आप एक बुज़ुर्ग सूफ़ी थे।

पंडित अमरनाथ मदन 'साहिर' देहलवी

पंडित अमरनाथजी का तख़ल्लुस 'साहिर' है। बरेली में सं. १८६३ ई. में पैदा हुए। आपके पिता रायबहादुर जानकीनाथ मदन बरेली म्युनिसिपाल्टिी में नौकर थे। साहिर साहब के चचा ब्रिटिश फ़ौज में सूबेदार थे और ग़दर में मारे गये। इसके बाद आपके पिता फ़ौज में मीर मुंशी मुक़र्रर हुए। १८७० ई. में वे नौकरी छोड़कर देहली आ गये। फिर आपके पिता ने सरकारी रेल महकमे में पेंशन मिलने तक नौकरी की।

साहिर साहब अंग्रेज़ी पढ़ने के वास्ते आगरा आये—वहाँ मुशायरों में भी शामिल होते रहे। और अब्दुल हलीम आसिम काशानी से इस्लाह लेते रहे।

आप नौकरी के सिलसिले में अजमेर व देहली में रहे। फिर सरकारी नौकरी मिली और पंजाब में बहुत दिन तक रहे। तहसीलदारी के ओहदे से पेंशन ली और देहली में अपने मकान 'लाल-हवेली' में रहने लगे। देहली आकर आपने 'बज़्मे-सखुन' बनायी जो शायरी की तरक़्क़ी में बहुत काम कर रही है। आपकी शायरी वेदान्त के रंग में रंगी है। 'मेहर' देहलवी ने भी शायरी में वेदांत लिखा है, मगर उनका नम्बर साहिर साहब के बाद ही आता है। आपकी कविता-संग्रह का नाम 'कुफ़्रे-इश्क़' है।

डाक्टर सर शेख़ मुहम्मद इक़बाल, एम. ए.

इक़बाल के बुज़ुर्ग काश्मीर से सियालकोट (पंजाब) आये। इक़बाल यहीं सन् १८७० में पैदा हुए। कालिज की तालीम लाहौर में पायी। स्काच मिशन कालेज के शम्सुल उलेमा मौलवी सैयद अमीर हसन ने इनमें अरबी-फ़ारसी का शौक़ पैदा किया। फलसफ़ा के मशहूर प्रोफ़ेसर आर्नोल्ड इनके उस्ताद रहे और उनका असर भी ज़बर्दस्त पड़ा।

कालेज के ज़माने से ही इक़बाल की शायरी मशहूर होने लगी। उस वक़्त सर अब्दुल क़ादिर का मासिक पत्र 'मख़ज़न' बहुत मशहूर था। इक़बाल की बहुत-सी कवितायें उसमें छपीं और पसन्द की गयीं। अंजुमन-हिमायते-इस्लाम में आपने जो नज़्में पढ़ीं उससे इनको ख़ूब शोहरत मिली। कालेज में पढ़ते वक़्त इक़बाल अपना कलाम अर्शद गुरगानी को दिखाया करते थे। फिर 'दाग़' से इस्लाह लेते रहे। लेकिन आपको 'ग़ालिब' का रंग बहुत पसंद था।

इक़बाल बी. ए. पास करने के बाद पहले ओरियण्टल कालेज, लाहौर में प्रोफ़ेसर हुए। १९०५ में युरप गये। वहाँ बैरिस्टरी और पी-एच. डी. के इम्तेहान पास किए। १९०८ में आप युरप से वापस आये। युरप जाने से पहिले आप क़ौमी रंग की शायरी करते थे। लौटने के बाद वह रंग पलट गया और वह इस्लाम और क़ौमियत में बैर बताने लगे।

इक़बाल ने इस्लाम के कर्मयोग का अच्छा सन्देशा दिया। सरकार से इनको 'सर' का ख़िताब मिला। रियासत भूपाल से ५००) महीना मिलता था। १९३८ ई. में इक़बाल का देहान्त हुआ।

मौलाना ज़फ़रअली ख़ाँ, लाहौर

मौलाना साहिब तहसील वज़ीराबाद, जिला गुज़रानवाला में मीरस गाँव में पैदा हुए। इनके वालिद सिराजुद्दीन अहमद थे। शुरू की तालीम वज़ीराबाद में हुई। एंट्रेन्स का इम्तहान पटियाला से पास किया। इसके बाद अलीगढ़ कालिज में दाख़िल हुए। फर्स्ट डिविज़न में बी. ए. पास किया। इसके बाद नवाब मुनहसिनुल मुल्क ने इन्हें हैदराबाद बुला लिया। यहाँ तरक़्क़ी करते-करते आप होम आफ़िस में असिस्टेंट सेक्रेटरी हुए।

आपको शायरी का शौक़ अलीगढ़ में ही लग गया था। हैदराबाद में उसमें भी तरक्क़ी हुई। यहाँ यह कई रिसालों के एडीटर भी रहे। शायरी में नवाब मिर्ज़ा ख़ाँ 'दाग़' से इस्लाह लेते रहे। १९०९ में आप नज़र बन्द किये गये और १९१९ से १९३० तक आपको असहयोग आन्दोलन के संबंध में सज़ाएँ भी मिलीं। मगर अब आप मुस्लिम-लीग में हैं। आपके विचारों में बहुत जल्द परिवर्तन होता रहता है।

मुंशी दुर्गासहायजी 'सरूर', जहानाबादी

जिला पीलीभीत, कस्बा जहानाबादी में सन् १८७३ में 'सरूर' साहब पैदा हुए। आप सक्सेना कायस्थ थे। पहिले कविता में 'वहशत' नाम रखते थे। फिर 'सरूर' रख लिया। मौलवी सैयद करामत हुसैन 'बहार' से फ़ारसी की तालीम पायी। तबियत में लापर्वाही बहुत थी। रुपये-पैसे का ख़्याल बहुत कम करते थे। इसलिये तमाम उम्र ग़रीबी में ही बसर हुई। और इसी वजह इन्होंने अपनी शायरी कौड़ियों के मोल बेच दी। और कुछ तो ऐसे लोगों के नाम से छपीं जो उनका सही-सही मानी तक नहीं समझ सकते थे। पहले हक़ीमी करते थे। वह न चली तो लड़के पढ़ाने लगे।

आपको शराब पीने की बुरी लत भी पड़ गयी थी। जिससे तन्दुरुस्ती पर बुरा असर पड़ा। जब इनके इकलौते बेटे और बीबी का भी देहान्त हो गया तो ग़म ग़लत कराने के वास्ते और भी पीना शुरू कर दी। नतीजा यह हुआ कि स्वास्थ्य और तेज़ी से गिरने लगा और ३७ साल की कम उम्र में (१९१० ई. में) आपकी मौत हो गयी। इसी साल आज़ाद भी इस दुनियाँ से उठ गए।

यह जब बीमार थे तब भी बराबर शराब पीते जाते थे। जब अन्त समय आया तो नौकर ने शराब की जगह गंगाजल दे दिया। मगर इन्हें होश था। इन्होंने मरते-मरते यह शेर कहा—

"वजाय मय दिया पानी का एक गिलास मुझे ;
समझ लिया मेरे साक़ी ने बदहवास मुझे।"

शायरी आपके रग-रग में थी। आप की कविताओं के दो संग्रह प्रकाशित हुए हैं।

मौलाना हसरत मोहानी 'हसरत'

आपका पूरा नाम है फ़ज़्लुल हसन। मगर तख़ल्लुस 'हसरत' के नाम से ही आप ज़्यादा मशहूर हैं। आप सैयद हैं। आप के पुरखे नैशापुर से हिन्दोस्तान आये थे। 'हसरत' साहब सन् १८७५ ई. में मोहान, जिला उन्नाव में पैदा हुए। मिडिल व एंट्रेंस का इम्तहान स्कालरशिप के साथ पास किया; उसी वक़्त (फ़तहपुर में) आपको शायरी का भी शौक़ हुआ और अच्छी कहने लगे। १९०३ में अलीगढ़ से बी. ए. पास किया और यहीं से 'उर्दू मुअल्ला' नाम का रिसाला निकाला जो अपने वक़्त के माहवारों में बहुत मशहूर हुआ।

१९०४ ई. में आप कांग्रेस में शामिल हुए। उस समय आप उग्रवादी दल में थे। अरविन्द घोष और तिलक पर आपकी बड़ी श्रद्धा थी। ज़ोर-

शोर से कॉंग्रेस का काम करने लगे। १९०७-८ के आन्दोलन में भाग लिया। १९०८ में आपने अपने रिसाले में एक ऐसा मज़मून लिखा कि इन्हें उस जुर्म में दो साल की सज़ा हो गयी और कई मुसीबतों का सामना करना पड़ा। १९१६ में भी इन्हें दो साल की सज़ा हुई। लड़ाई के दिनों में यह सरकार की मदद करने के खिलाफ़ थे। जेल से छूटने पर भी बहुत दिनों तक नज़र-बन्द रहे। उसके बाद कानपूर चले आये और अब वहीं रहते हैं। १९२१ में फिर आपको सज़ा हुई, जब आप यू. पी. कॉंग्रेस कमिटि के प्रेसिडेंट थे। १९२३ ई. से आपके राजनैतिक विचार बदले। आजकल आप मुस्लिम लीग के लीडरों में हैं।

शायरी में यह अमीर उल्ला खाँ 'तस्लीम' के शागिर्द हैं। जेल में भी बराबर लिखते रहे। शायरी करने के अलावा भी आपने साहित्य की काफ़ी सेवा की है। और कड़ी मेहनत करके खोज भी की है। आप नये रंग की शायरी तो नहीं करते मगर नये रंग में ग़ज़लें कहना आप ही ने शुरू की। ग़ज़ल कहनेवालों में आपको या 'जिगर' को ही अव्वल माना जा सकता है।

शौकतअली खाँ 'फ़ानी'

शौक़त अली खाँ १८७६ में जिला बदायूँ में इस्लाम नामक कस्बे में पैदा हुए। १३ साल की उम्र तक इन्हें फ़ारसी, अरबी की तालीम दी गयी। इसके बाद अंग्रेज़ी पढ़ना शुरू की। १९०१ में बरेली कालेज से बी. ए. पास किया। १९०८ में अलीगढ़ से एल-एल. बी. हुए। शेर कहने का शौक़ लड़कपन ही से था। पहली ग़ज़ल ११ साल की उम्र में कही। २० साल की उम्र में आपका पहला दीवान तैयार हुआ। मगर वह बर्बाद हो गया। आपने कुछ अंग्रेज़ी ड्रामों का तर्जुमा भी किया। १९०६ में आपका दूसरा दीवान तैयार हुआ। और वह भी पहले दीवान की तरह ज़ाया हो गया। इसके बाद शायरी से आपका जी टूट गया; फिर १९१० तक आपने कोई कविता नहीं की।

बदायूँ से निकलनेवाले 'नक़ीब' नामक रिसाले ने आपका पहला दीवान छापा। इसीमें आपका असली रंग है और इसी से आपको नामवरी भी हासिल हुई।

आपकी दुनियवी ज़िन्दगी परेशानियों में ही बीती है। आपने लखनऊ, बरेली, इटावा, आगरा हर जगह वकालत की, मगर कहीं न चली। मज़बूर होकर यह पेशा छोड़ दिया। आजकल दारुल-शफ़ा हाइ स्कूल हैदराबाद में हेड-मास्टर हैं। आपकी ज़िन्दगी की नाकामियों का असर आपकी शायरी पर भी पड़ा है। उसमें निराशा का रंग गहरा हो गया है। उनके दीवान के ऊपर और तस्वीर के नीचे यह शेर छपा है—

"ए अहले-बज़्म है कोई नक़्क़ादे-सोज़े-दिल;
लाया हूँ दिल के दाग़ नुमाया किए हुए।"

सैयद आशिक हुसैन 'सीमाब' अकबराबादी

मौलाना आशिक हुसैन 'सीमाब' का पुराना वतन आगरा है। इनके पिता का नाम मौलाना मुहम्मद हुसैन था जो खुद भी अच्छे विद्वान थे। 'सीमाब' साहब १८८१ ई. में आगरे में पैदा हुए। फ़ारसी, अरबी और अंगरेज़ी की तालीम अजमेर में पायी। शायरी का शौक़ लड़कपन से ही था। पहले मुंशी 'फ़िसू' साहब से इस्लाह लेते थे फिर नवाब 'दाग़' के शागिर्द हुए। उनके मरने के बाद फिर और किसी से इस्लाह नहीं ली। अभी आप मशहूर शायरों और विद्वानों में गिने जाते हैं। गद्य और पद्य में लगभग ८० किताबें आपने लिखी हैं। आपके ड्रामों में 'खूबसूरत बला' और 'फ़रेबे-वफ़ा' बहुत मशहूर हैं। आप कई रिसालों के एडीटर भी रह चुके हैं। अजमेर से 'फ़ानूसे-ख़याल'; आगरे से 'आगरा अख़बार' निकाले फिर 'पैमाना' चला और आजकल 'शायर' आगरे से अब भी निकल रहा है। आपकी शायरी की किताबों में 'कारे-इमरोज़' और 'कलीमे-अज़म'

बहुत मशहूर हैं। और एक दीवान छप रहा है। आपके सौ के क़रीब शागिर्द हैं जिनमें 'साग़र' निज़ामी और 'राज़' चाँदपुरी ज़्यादा मशहूर हैं। 'सीमाब' साहब तारीख़ बहुत अच्छी और बहुत जल्द कहते हैं। शायरी में इनका रंग अपने उस्ताद से अलग है। इन्होंने 'हाली' और 'इक़बाल' के बीच की राह पकड़ी है। और उसमें बहुत कामयाब हैं।

मिर्ज़ा मुहम्मद हादी 'अज़ीज़'

मिर्ज़ा मुहम्मद हादी के पुरखे शीराज़ से काश्मीर आये थे। अवध के नवाबों के ज़माने में इनके बुज़ुर्ग लखनऊ आये। आपके पिता का नाम मिर्ज़ा मुहम्मद अली था जो ख़ुद भी बड़े आलिम थे। उन्होंने कई मशहूर और बढ़िया किताबें लिखीं। 'अज़ीज़' १८८२ में लखनऊ में पैदा हुए। अभी सात साल के भी नहीं हुए थे कि बाप मर गये। फ़ारसी कविता में आग़ा सय्यद मुहम्मद साहब 'हाज़िक' से इस्लाह ली। उर्दू की कुछ ग़ज़लें सफ़ी साहब को दिखायी थीं। अंग्रेज़ी तालीम नहीं पायी थी मगर उर्दू, फ़ारसी और अरबी के मशहूर आलिम थे। बड़े होने पर एक रईस के यहाँ, जो विद्वानों की बड़ी क़दर करते थे—प्राइवेट सेक्रेटरी का काम करने लगे। इसी ज़माने में आपकी शायरी की तरक़्क़ी हुई और वह हिन्दुस्तान के मशहूर शायरों में शुमार होने लगे। इसके बाद आप अमीनाबाद हाइ-स्कूल में टीचर मुक़र्रर हुए। बी. ए. और एम. ए. के विद्यार्थी भी फ़ारसी पढ़ने में आपसे मदद लिया करते थे। कुछ दिनों बाद—१९२८ ई. में महाराजा साहिब महमूदाबाद ने आपको अपने यहाँ बुलाया और उनके बेटे को यानी मौजूदा महाराजा को पढ़ाते रहे। बाद को डेढ़ सौ रुपये माहवार पर आप वहीं लाइब्रेरियन मुक़र्रर हुए। बहुत दिनों तक बीमार रहने के बाद १९३५ में आपने हमेशा के लिये आँखें मूँद लीं।

अज़ीज़ अपने समय के सबसे मशहूर कसीदा कहनेवाले थे। ग़ज़लें भी ख़ूब कहते थे। महाकवि अकबर ने आपकी तारीफ़ में यह शेर कहा था—

"सुख़न में और तो अहले तमीज़ ही हैं फ़क़त।
शहीदे-जलवए-मानी अज़ीज़ ही हैं फ़क़त॥"

मिर्ज़ा यास यगाना चंगेज़ी 'लखनवी'

मिर्ज़ा यास १८८३ ई. में अज़ीमाबाद में पैदा हुए। एंट्रेंस पास किया। शायरी में बिहार के सबसे मशहूर शायर 'शाद' अज़ीमाबादी के शागिर्द हुए। १९०५ ई. में लखनऊ आये, यहीं शादी की और जम गए। यहाँ आपमें और दूसरे शायरों में चोटें चलने लगीं। मिर्ज़ा साहब की पार्टी में थोड़े ही लोग थे, फिर भी आप ख़ूब लड़े। १९१५ ई. में 'चिराग़े-सख़ुन' नाम की किताब निकाली। आप कविता के रहस्यों से खूब वाकिफ़ थे। फिर भी लखनऊ में इनका रंग नहीं ही जमा। इसलिए लखनऊ छोड़कर लाहौर गये। यहां इनका दीवान "आयाते-वजदानी" के नाम से छपा। फिर यह रियासत हैदराबाद में बुला लिये गये। यहाँ सब रिजिस्ट्रार की हैसियत से काम करते हैं। पहले इनका तख़ल्लुस यास अज़ीमाबादी था; अब यगाना लखनवी है। इनके चौपदे तराना के नाम से हैदराबाद में छपे हैं।

असग़र हुसेन साहब "असग़र" गोंडवी

असग़र हुसेन साहब १८८४ ई. में गोरखपुर में पैदा हुए। इनके वालिद गोरखपुर में क़ानून-गो थे। वहीं से पेंशन ली और वहीं रहने लगे। असग़र साहब ने किसी कालेज में सर नहीं मारा, मगर अंग्रेज़ी, फ़ारसी, अरबी में अच्छी महारत हासिल की। यह सब निजी स्वाध्याय का फल है।

शायरी में पहले मुंशी ख़लील अहमद बिलग्रामी से इस्लाह लेते रहे। फिर अपनी ग़ज़लें मुन्शी अमीरुल्ला तस्लीम को दिखाईं। कुछ दिनों तक अपनी रोज़ी कमाने के वास्ते ऐनक की तिज़ारत करते रहे। फिर उर्दू मरक़ज़ लाहौर में रहे। बाद को हिन्दुस्तानी एकाडमी इलाहाबाद के तिमाही रिसाला 'हिन्दुस्तानी' के एडिटर हुए।

असग़र ने केवल गज़लें ही गज़लें कही हैं। मगर उसमें भी एक नया रंग पैदा किया है। आम तौर से ग़ज़लों में रंज ग़म के मज़मून पाये जाते हैं या फिर प्रेम के। असग़र की गज़लों में शुद्ध ग़नोवैज्ञानिक भाव मिलते हैं। उन्होंने ज़्यादातर आनन्द और उत्साह के मज़मून बाँधे हैं। आध्यात्मिक ज्ञान के मज़मून भी आपमें बहुत मिलते हैं। मगर इन अहम मज़मूनों को भी आपने बड़ी रंगीनी के साथ बाँधा है। इनके गुरु का नाम शाह सय्यद अब्दुल ग़नी, मंगलौरी था। सन् १९३६ में असग़र का देहान्त हो गया।

मुंशी महाराज बहादुर 'बर्क़' देहलवी, बी.ए.

नये रंग के मशहूर शायरों में 'बर्क़' बहुत ही मशहूर हुए हैं। आपके पिता मुन्शी हर नारायणदास भी शायर थे और 'हसरत' नाम से लिखते थे। बुज़ुर्गों का वतन एटा था मगर 'बर्क़' देहली में १८८४ ई. में पैदा हुए। शुरू का ज़माना ग़रीबी में बीता। अपनी मंशा के मुताबिक तालीम न पा सके। मुश्किल से एंट्रेंस पास किया और पोस्टल-आडिटर आफ़िस में कामकरने लगे। पढ़ने-लिखने का सिलसिला भी ज़ारी रहा। उसी हालत में मुन्शी फ़ाज़िल और बी. ए. के इम्तहान पास किये। अपने काम में भी तरक़्क़ी करते रहे और आख़िर में अपने महकमे के सुपरिंटेंडेंट हो गए। 'बर्क़' ने पहले 'दाग़' से अपनी शायरी दुरुस्त करायी। लेकिन दाग़ हैदराबाद में थे और यह देहली में। इसलिये दाग़ के कहने से दाग़ के शागिर्द आग़ा शायर से इस्लाह लेने लगे। सन् १९०८ में बर्क़ की पहली नज़्म "अमले ख़ैर" के नाम से 'अदीब' नाम के रिसाले में साया हुई। इसकी बड़ी धूम मची और यह नज़्म अलग छपवाकर हज़ारों की तादाद में बाँटी गयी। फिर तो आहिस्ता-आहिस्ता 'बर्क़' का शुमार हिन्दुस्तान के मशहूर शायरों में होने लगा। इनकी कविताओं का संग्रह "मतलए-अनवार" के नाम से छपा है।

१९३६ में यह अपने एक शागिर्द की लड़की की शादी में गए। वहीं दिल की हरकत बन्द हो जाने से मौत हो गयी। इनकी शोक सभा की सदारत श्रीमती सरोजिनी नायडु ने की थी।

तिलोकचन्दजी 'महरूम', बी.ए.

मुंशी तिलोकचन्दजी 'महरूम' हिन्दुस्तान की उत्तर पश्चिम सीमा पर के सब से मशहूर शायर हैं। जिस तरह डाक्टर इक़बाल की शायरी सर अब्दुल क़ादिर के रिसाले 'मख़ज़न' से मशहूर हुई उसी तरह इनकी शायरी भी। इनकी कविताओं से मालूम पड़ता है कि इनका बचपन सिंध में बीता। मगर इनकी जीवनी में यही लिखा है कि इनकी जन्मभूमि पच्छिमी पंजाब है। जहाँ यह ज़िला मियानवाली के ईसाखेल नाम के गाँव में १८८५ ई. में पैदा हुए। पिता का नाम भगत रामदयाल था। शायरी में आप किसी के शागिर्द नहीं हैं, न आपके घर में ही शायरी का चर्चा था। क्योंकि आपके यहाँ खेती-बारी का काम होता था। एंट्रेंस पास कर आपने ट्रेनिंग की और १९०८ में मिशन हाई-स्कूल, डेरा इस्माइलखाँ में इंगलिश मास्टर हुए। पढ़ने का शौक़ था ही। इसलिए मास्टरी करते हुए आपने बी.ए. भी पास किया और आजकल मिडिल स्कूल के हेड मास्टर हैं।

इनको विद्यार्थी जीवन में ही शायरी का चस्का लगा था। फ़ारसी और अंग्रेज़ी नज़्मों का तरजुमा बड़ी ख़ूबसूरती के साथ किया है। उर्दू के बड़े आलिम सर अब्दुल क़ादिर ने आपकी तारीफ़ की है। आप सब रंगों में लिखते हैं। आपकी शायरी की सराहना करते हुए अकबर ने लिखा था—

"है दाद का मुस्तहक़ कलामे-महरूम;
लफ़्ज़ों का जमाल और मानी का हुजूम।"

महरूम ने इसका यों जवाब दिया—

'हुआ मुझको यक़ीं कि शायर हूँ मैं;
जब दाने-सख़ुन जनाबे अकबर से मिली।'

डाक्टर सईद अहमद साहब 'सईद' बरेलवी

बरेली में सन् १८८५ ई. में सईद अहमद साहब पैदा हुए। वालिद मुन्शी मुहम्मद अब्दुल क़रीम आपकी छोटी उम्र में ही छोड़कर चल बसे। सईद साहब ने आम-रिवाज़ के मुताबिक शुरू में अरबी, फ़ारसी ही पढ़ी। तबीयत में शायरी बचपन से ही घर कर गयी थी। आपने पहली ग़ज़ल लिखी थी, जब आप महज़ सात साल के थे। मगर जवानी में ग़ज़लें कहने का शौक़ छूट गया था और नये रंग की शायरी कहने लगे। १९ साल की उम्र में आपने आगरे से डाक्टरी का इम्तहान पास किया। उस वक़्त आपकी तबीयत में सैलानीपन भी काफ़ी था। इसलिए फ़ौजी नौकरी की। १९१४ की लड़ाई में युरोप भेजे गये। पाँच साल तक मिश्र, फिलिस्तीन, ईरान, अरब वग़ैरह मुल्कों में रहे। फ्रान्स में भी ढाई साल तक रहने का मौक़ा मिला। लड़ाई के बाद जब देश वापस लौटे तो यहां असहयोग आन्दोलन शुरू हो चुका था। आप इसमें शरीक हुए और सरकारी नौकरी से इस्तीफ़ा दे दिया। इसके बाद जब मौलाना मुहम्मद अली ने 'हमदर्द' अख़बार निकाला तो आपको देहली बुला लिया। कुछ दिनों तक 'हमदर्द' में काम किया। लेकिन मौलाना से मतभेद हो जाने की वजह वहाँ से भी अलहदा हो गए और देहली ही में डाक्टरी करने लगे।

आपका एक रिसाला "तबीबे-निसवां" नाम से निकलता है, जिसमें स्त्रियों के इलाज की विधियां होती हैं। एक शायर की हैसियत से आपका दर्जा बहुत ऊँचा है। आपकी कविता में बड़ी बेतकल्लुफ़ी और असर है।

सय्यद अहमद हुसेन 'अमजद'

सय्यद अहमद हुसेन आजकल दक्खिन के बहुत मशहूर शायरों में हैं। १८८६ ई. में हैदराबाद में पैदा हुए। इनके वालिद सूफ़ी सय्यद रहीम अली इनके छुटपन में ही मर गये। तालीम पुराने ढंग से ही शुरू हुई। फिर इन्होंने पंजाब युनिवर्सिटी से 'मुंशी आलिम' और 'मुन्शी फ़ाज़िल' के इम्तहान पास किए और बैंगलोर के सरकारी स्कूल में मास्टर हो

गए। बाद को हैदराबाद के मदरसए-दारुल-उलूम में चले आये। अब सदर मुहासिबी के दफ़्तर में नौकर हैं।

आपकी ज़िन्दगी बड़े दुख में गुज़री है। माता-पिता का साया बचपन में ही सर से उठ गया था। जवानी में भी एक दुखभरी भयंकर घटना हो गयी। १९०८ ई. में हैदराबाद की मुसी नदी में ज़ोर की बाढ़ आयी। वे मुहल्ला चार-महल में उस नदी के किनारे रहते थे। बाढ़ का पानी अंधेरी रात में किनारों को लाँघ कर गलियों में घुसा। और भी ज़ोर आया और पानी बन्द कमरों और दीवानखानों में भी घुसने लगा। और इसी बढ़िया में आपकी माँ, बीबी और लड़की तीनों की तीनों रातों-रात लाश की शकल में ही बच रहीं। गोया अमजद का सब कुछ लुट गया और वे सोये रहे। अमजद ने इस घटना पर जो कविता लिखी है वह दिल को हिला देनेवाली है। इसके बाद फिर आपने शादी की। कुछ दिनों बाद हज करने गये। लौटकर आये तो यह बीबी भी इनको हमेशा के वास्ते छोड़कर कूच कर चुकी थी। तब से इनके मन में वैराग्य भर गया।

१५ साल की उम्र में आपको शायरी का शौक़ नासिख़ का कलाम पढ़कर पैदा हुआ। लेकिन आपकी शायरी में नासिख़ का रंग नहीं है, बल्कि बिलकुल अलग है। नासिख़ के यहाँ शब्दों का सौंदर्य है और इनके कलाम में दर्द और असर है। शुरू में आपने जो शायरी की थी वह तो मुसी की उसी बढ़िया में खतम हो गयी। बाद के कलाम 'रियाज़े-अमजद' और 'ख़िर्कए-अमजद' के नाम से दो जिल्दों में छपे हैं। इसके अलावा आपने नसर में भी कुछ किताबें लिखी हैं, जिनमें से एक में आपके हज का हाल है, और एक में आपने अपनी जीवनी लिखी है। अमजद की रुबाइयाँ (चौपदे) बहुत मशहूर हैं।

पंडित ब्रजनारायण 'चकबस्त', लखनवी

'चकबस्त' राष्ट्रीय कवियों में सबसे ऊँचे दर्जे के कवि हुए हैं। १८८२ ई. में फ़ैज़ाबाद में पैदा हुए। बचपन से ही लखनऊ में रहे इसलिये लखनवी कहलाते हैं। जातिके काश्मीरी ब्राह्मण थे। पिता का नाम था पं. उदित

नारायण। चकबस्त की स्कूली तालीम लखनऊ में हुई और यहीं कैनिंग कालेज (अब युनिवर्सिटी कालेज) से १९०८ में बी.ए. का इम्तहान पास किया और १९०७ में वकालत का।

शायरी का शौक़ बचपन से ही था। पहिला शेर ९ साल की उम्र में कहा। कालेज में पहुँचने पर तो अच्छे ख़ासे शायर हो चुके थे। इन्होंने शायरी में जनाब रहमतुद्दौला हकीम से इस्लाह ली थी। जिस ज़माने में यह लखनऊ में पढ़ रहे थे, इनको बिशननारायण दर से बहुत मदद मिली। दर साहब राजनीति ही नहीं, बल्कि फ़ारसी, उर्दू और अंग्रेज़ी के प्रकांड विद्वान थे। 'चकबस्त' ने इन तीनों ज़बानों में आपसे काफ़ी योग्यता हासिल की। इतना ही नहीं, आपकी शायरी में राष्ट्रीयता का रंग भी उन्हीं की बदौलत चढ़ा। आपका दीवान जो 'सुबह-अम्मेद' के नाम से छपा है; उसमें आपकी १६-१७ साल की उम्र में लिखी कुछ नज़्में भी छपी हैं, जिनको पढ़कर अचंभा होता है।

'चकबस्त' लखनऊ के प्रसिद्ध वकीलों में थे। फ़रवरी १९२६ ई. में एक मुक़द्दमे की पैरवी करने रायबरेली गए थे, वहीं फ़ालिज गिरा और घर भी न पहुँच पाये थे कि लखनऊ स्टेशन पर आपकी मृत्यु हो गयी।

'चकबस्त' ने अपनी शायरी में मीर, अनीस और आतिश को नये रंग में ढाला है। जब तक काँग्रेस पर महात्मा गाँधी का रंग नहीं चढ़ा था, यह काँग्रेस में शरीक रहे। बाद को यह लिबरल-लीग में शामिल हो गये थे। इन्होंने राजनैतिक नेताओं की मौत पर मर्सिये भी बहुत अच्छे लिखे हैं।

अली सिकन्दर 'जिगर' मुरादाबादी

मुरादाबाद में अली सिकन्दर मशहूर ख़ान्दान में पैदा हुए। इनके पुरखे देहली के रहनेवाले थे और बादशाह शाहजहाँ को पढ़ाते थे। एक बार बादशाह नाख़ुश हो गए; इसीलिए वे देहली छोड़कर मुरादाबाद चले आये। 'जिगर' साहब के दादा हाफ़िज़ मुहम्मद नूर व वालिद मौलवी अली नज़र भी शायर थे। आपके छोटे भाई अली मुज़फ़्फ़र भी शायर हैं और 'दिल' तख़ल्लुस करते हैं।

आप १८८३ में पैदा हुए। तालीम मामूली हुई। मिशन स्कूल से एंट्रेंस पास किया। फ़ारसी खूब पढ़ी। फ़ारसी में भी शायरी करते हैं। जिगर ने कई उस्तादों से इस्लाह ली है। पहिले दाग़, फिर मुन्शी अमीरुल्ला तस्लीम, फिर मुन्शी हयात बख़्श रसाँ और आख़िर में असगर को अपना कलाम दिखाते रहे।

कुछ दिनों तक जीविका के वास्ते ऐनक बेचते रहे। आजकल 'भूपाल-हाउस' लखनऊ में रहते हैं। आपकी ज़िन्दगी तकलीफ़ों में बीती। एक के बाद दूसरी—दो बीवियाँ मर गयीं। घर के और कई लोग और दोस्त नज़रों के सामने ही चल बसे। इसका असर आपके दिल पर और शायरी पर भी पड़ा है। यों आपकी तबीयत बहुत आज़ाद है। रुपये-पैसे की परवाह ज़रा भी नहीं करते। दिल बहुत ही साफ़ है। तकल्लुफ़ बिल्कुल पसन्द नहीं करते। सच्चे शायर हैं। मिलनसार हैं। ग़ज़लें कहते भी अच्छी हैं, और पढ़ते भी ख़ूब हैं।

शब्बीर हसन ख़ाँ, 'जोश' मलीहाबादी

'जोश' १८९४ ई. में ज़िला लखनऊ के मलीहाबाद तहसील में पैदा हुए। इनके बाप-दादा पुराने रईस थे। मलीहाबाद के पठान अपनी ताक़त व बहादुरी के लिए मशहूर हैं। जोश के दादा भी बड़े ताक़तवर थे। उनके बहुत से क़िस्से मशहूर हैं। इनके पुरखे तलवार ही के धनी नहीं थे—बल्कि कलम के भी अच्छे माहिर थे। इनके परदादा मुहम्मद ख़ाँ एक मशहूर शायर भी थे और फ़ौज के रिसालदार भी। लखनऊ में उनके नाम पर एक कटरा भी आबाद है।

'जोश' अभी छोटे ही थे कि इनके वालिद का देहान्त हो गया और ज़मींदारी का इन्तज़ाम इनके सर पर आ पड़ा। इसलिये भी तालीम अच्छी न हो सकी। लेकिन अदबी-शौक़ न छूटा। शायरी में लखनऊ के मशहूर उस्ताद अज़ीज़ से इस्लाह ली। मगर उनका रंग कुछ और था, इनका कुछ और। जोश ने अंग्रेज़ी में भी अच्छी लियाक़त हासिल की और हैदराबाद के तरजुमा के महकमे के अफ़सर मुक़र्रर हुए। मगर यह शायरे-इनक़लाब

कहलाते हैं। रियासत में इनका गुज़र क्या होता! १९२३ से १९३३ तक वहाँ रहकर वापिस चले आए। देहली से 'कलीम' नाम का माहवार निकालने लगे। आजकल आप सिनेमा लाइन में काम कर रहे हैं।

'जोश' अपने रंग के बहुत अनोखे शायर हैं। इन्होंने देश की दुर्दशा और मज़हब के नाम पर सिर-फुटौव्वल के खिलाफ़ बड़ी अच्छी शायरी लिखी है। इश्क़िया शायरी भी करते हैं। कहीं मज़हबी ठेकेदारों को चिढ़ाने के वास्ते नास्तिक का रूप भी बना लेते हैं। आपकी कविताओं का पहला संग्रह 'रूहे अदब' था। इधर और कई किताबें आपके नाम से छपी हैं।

समदयार खाँ 'साग़र निज़ामी'

हिन्दुस्तान के शायरों में 'साग़र' के पढ़ने की धूम है। शायद ही कोई शायर इनसे अच्छी तरह अपनी शायरी अदा करता हो। इनके पढ़ते वक़्त एक समाँ बँध जाता है। आप १९०५ में अलीगढ़ में पैदा हुए। सबसे पहले जब नौ साल के थे तब शेर कहा और १२-१३ साल के हुए तब तो मुशायरों में कहने लगे। इनकी खुशकिस्मती से इन्हें अल्लामा 'सीमाब' जैसा उस्ताद मिल गया। उन्होंने दिलोजान से इस होनहार शागिर्द पर तवज्जह दी और शायरी के राज़ खोलकर इनके सामने रख दिए। 'सीमाब' साहब की सरपरस्ती में आगरा से शायरी का एक मासिक पत्र निकलता था। साग़र उसके एडीटर थे और यहीं से इनका नाम मशहूर होना शुरू हुआ।

१८ साल की उम्र में साग़र ख़्वाजा हसन निज़ामी के मुरीद हुए और तब से 'साग़र निज़ामी' कहलाते हैं। ख़्वाजा साहब ने इनका हुलिया इस तरह लिखा है; "मियाना क़द; गन्दुमी नमकीन आँखें; रसीली, रोशन और क़ुदरत के ग़ैबी जाम से मख़मूर चेहरा; किताबी आवाज़—हर किस्म के क़दीम व जदीद बाजों को शरमानेवाली।"—आजकल 'साग़र' साहब मेरठ में रहते हैं और वहीं से 'एशिया' नाम का माहवार रिसाला निकालते है। अब इनको मुशायरों में पढ़ने का शौक़ नहीं रहा। ये साहित्य की ठोस सेवा करना चाहते हैं। मगर लोग नहीं मानते और घसीटकर मुशायरों में ले ही जाते हैं।

'साग़र' की कविताओं का संग्रह १९३४ ई. में छपा जिसका नाम "बादए मशरिक़" है। इसकी भूमिका लिखते हुए श्रीमती सरोजिनी नायुडू ने इस बात की बहुत तारीफ़ की है कि 'साग़र' ने अपनी कविता में भारत के ही प्राकृतिक दृश्य लिए हैं, यहीं की उपमा और अलंकार लिये हैं और अक़्सर कवितायें भारतीय छन्द में हैं।

हफ़ीज़ जालन्धरी

आप पंजाब के मशहूर शायर हैं। आपकी नज़्में और गीत हिन्दोस्तानी जज़्बात की तर्जुमानी करती हैं। नये ढंग की शायरी आपने ख़ूब की है आपकी ज़बान साफ़, सरल और प्यारी है। "नज़्मा" 'ज़ार' "सोज़ व साज़" और "शाहनामा इसलाम" आपकी कविता की किताबें हैं।

जगतमोहन साहेब ख़ाँ

चौधरी मुन्शी गंगा प्रसाद के चौथे बेटे थे। सन् १८८९ ई. में पैदा हुए। नौ साल की उम्र में इनके पिता का देहान्त हो गया। १९०७. ई. में मौरवाँ हाइ-स्कूल से एंट्रेंस अव्वल दर्जे में पास किया। सन् १९११ ई में बी. ए. हुए। फिर एम. ए. और एल. एल-बी. भी हुए। उन्नाव में वकालत करने लगे। अपने पेशे में भी बड़ा नाम कमाया। अफ़सोस के साथ कहना पड़ता है कि जवानी के आलम में ही सन् १९३४ ई. में इस दुनियाँ से चल बसे।

उनके दीवान "रूह ख़ाँ" के पढ़ने से पता चलता है कि वह किस पाये के शायर थे। उनकी शायरी में ऊँचे जज़्बात, जोश व ख़रोश, क़ौमियत का एहसास और दर्द व तासीर है। ज़बान साफ़, सरल और मंजी हुई।

एहसान दानिश

पंजाब के 'मज़दूर शायर' के नाम से मशहूर हैं। हिन्दोस्तान की ग़रीबी के साथ हिन्दोस्तान के कुदरती नज़्ज़ारों का नक़्शा ऐसा अच्छा खींचते हैं कि दिल पर असर किए बग़ैर रह नहीं सकता। ज़बान बड़ी प्यारी है।

पहली बहार

दुआ

मौलाना मुहम्मद हुसैन 'आज़ाद'

आलम है अपने बिस्तरे-राहत पै ख़्वाब में,
'आज़ाद' सर झुकाए ख़ुदा की जनाब में।
फैलाए हाथ सूरते-उम्मीदवार है,
औ' करता सच्चे दिल से दुआ बार बार है॥

मुझको तो मुल्क से है, न है माल से ग़रज़,
रखता नहीं ज़माने के जंजाल से गरज़।
या रब! ये इल्तिजा है, करम तू अगर करे,
वह बात दे ज़बाँ को जो दिल पर असर करे॥



हुब्बे वतन

ख़्वाजा अलताफ़ हुसैन साहब 'हाली', पानीपती

ऐ दिल, ऐ बन्दाए-वतन, होशियार,
ख़्वाबे-गफ़लत से हो ज़रा बेदार।
नाम है क्या इसी का हुब्बे-वतन ?
जिसकी तुझको लगी हुई है लगन।

कभी बच्चों का ध्यान आता है ?
कभी यारों का ग़म सताता है ?
याद आता है अपना शहर कभी ?
लौ कभी अहले-शहर की है लगी ?

नक़्श है दिल पे कूचाओ-बाज़ार ?
फिरते आँखों में हैं दरो-दीवार ?
क्या वतन की यही मुहब्बत है ?
यह भी उल्फ़त में कोई उल्फ़त है ?

इसमें इन्सां से कम नहीं दरिन्द,
इससे ख़ाली नहीं चरिन्दो-परिन्द।
टुकड़े होते हैं संग गुर्बत में,
सूख जाते हैं रूख फ़ुर्क़त में।

जाके काबुल में आम का पौदा,
कभी परवान चढ़ नहीं सकता।
आके काबुल से याँ बिही औ' अनार,
हो नहीं सकते बास्वर जिन्हार।

मछली जब छूटती है पानी से,
हाथ धोती है ज़िन्दगानी से।
घोड़े जब खेत से बिछुड़ते हैं,
जान के उनके लाले पड़ते हैं।

गाय या भैंस, ऊँट या बकरी,
अपने अपने ठिकाने खुश हैं सभी।
कहिए हुब्बे-वतन इसी को अगर,
हमसे हैवाँ नहीं कुछ कमतर।

बैठे बेफ़िक्र क्या हो, हमवतनो !
उट्ठो, अहले-वतन के दोस्त बनो।
मर्द हो तो किसी के काम आओ,
वरना खाओ-पिओ चले जाओ।

जब कोई ज़िन्दगी का लुत्फ़ उठाओ,
दिल को, दुख भाइयों के याद दिलाओ।
खाना खाओ तो जी में तुम शर्माओ,
ठंडा पानी पियो तो अश्क बहाओ।

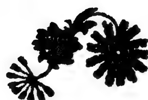
नया चमन

कितने भाई तुम्हारे हैं ना-दार,
ज़िन्दग़ी से जिनका दिल है बेज़ार।
नौकरों की तुम्हारे जो है ग़िज़ा,
उनको वो ख़्वाब में नहीं मिलता।

जिस पै तुम जूतियों से फिरते हो,
वाँ मयस्सर नहीं वो ओढ़ने को।
खाओ तो पहले लो ख़बर उनकी,
जिन पै विपदा है नेसती की पड़ी।

पहनो तो पहले भाइयों को पहनाओ,
कि है उतरन तुम्हारी जिनका बनाओ।
एक डाली के सब हैं बर्गो-समर,
है कोई इनमें ख़ुश्क, कोई तर।

सब को है एक अस्ल से पैवन्द,
कोई आज़ुर्दा है कोई ख़ुर्सन्द।
जागनेवालो! ग़ाफ़िलों को जगाओ,
पैरनेवालो! डूबतों को तराओ।



नया शिवाला

डाक्टर सर शेख़ मुहम्मद 'इक़बाल', एम.ए.

सच कह दूँ ऐ बरहमन! गर तू बुरा न माने।
तेरे सनम-क़दों के बुत हो गये पुराने॥
अपनों से बैर रखना तूने बुतों से सीखा।
जंगो-जदल सिखाया वाइज़ को भी ख़ुदा ने॥
तंग आके मैंने आख़िर दैरो-हरम को छोड़ा।
वाइज़ का वाज़ छोड़ा, छोड़े तेरे फ़िसाने॥
पत्थर की मूरतों में समझा है तू ख़ुदा है।
ख़ाके-वतन का मुझको हर ज़र्रा देवता है॥

आ ग़ैरियत के परदे इक बार फिर उठा दें।
बिछड़ों को फिर मिला दें, नक़्शे दुई मिटा दें॥
सूनी पड़ी हुई है मुद्दत से दिल की बस्ती।
आ, इक नया शिवाला इस देश में बना दें॥
दुनियाँ के तीरथों से ऊँचा हो अपना तीरथ।
दामाने-आसमाँ से इसका कलश मिला दें॥
हर सुबह उठकर गायें मन्तर वो मीठे मीठे।
सारे पुजारियों को मय पीत की पिला दें॥
शक्ती भी, शानती भी भगतों के गीत में है।
धरती के बासियों की मुक्ती पिरीत में है॥

उठ बाँध कमर

मौलाना ज़फ़रअली ख़ाँ, लाहौर

अल्लाह का जो दम भरता है, वो गिरने पर भी उभरता है ।
जब आदमी हिम्मत करता है, हर बिगड़ा काम संवरता है ॥
उठ बाँध कमर क्या डरता है ।
फिर देख ख़ुदा क्या करता है ॥

बिखरी हुई कुव्वत तेरी है, सिमटी हुई हिम्मत तेरी है ।
वरना ये हुकूमत तेरी है, आलम की ख़िलाफ़त तेरी है ॥
उठ बाँध········ ।

तू इल्म की दौलत लाया है, तहज़ीब सिखाने आया है ।
तू जब से जहाँ पर छाया है, दुनिया की पलट गयी काया है ॥
उठ बाँध········ ।

गुलशन में बहार है आयी हुई, गरदूँ पै घटा है छायी हुई ।
फिरती है सबा इठलायी हुई, तक़दीर है पल्टा खायी हुई ॥
उठ बाँध कमर, क्या डरता है ।
फिर देख ख़ुदा क्या करता है ॥

सीताजी की आरज़ू

मुंशी दुर्गासहायजी 'सरूर', जहानाबादी

हमराह अपने बन को मुझे नाथ ले चलो,
रेखा तुम्हारे चरण की हूँ, साथ ले चलो।
नाजुक है मेरा शीशाए-दिल टूट जायगा,
छूटा तुम्हारा साथ तो जी छूट जायगा।

रातें न कट सकेंगी अकेले फ़िराक़ में,
घड़ियाँ वो जिसने झेली हों झेले फ़िराक़ में।

क़िस्मत ने जब से बाप के घर से जुदा किया,
स्वामी! मुझे न तुमने नज़र से जुदा किया।
पुतली की तरह आँखों में शामो-सहर रही,
पहलू में बनके सब्र-शिकेबे-जिगर रही।

दुख आज तक सहा न ग़मे-रोज़गार का,
मुझ पर करम रहा सितमे-रोज़गार का।

माना कि दश्त में, ग़मो-अलाम हैं बहुत,
बन-बासियों को दुख सहरो-शाम हैं बहुत।
ईज़ा अगरचे आबला-पाई की है कड़ी,
दोज़ख़ से बढ़के आग जुदाई की है कड़ी।

ये आग वो है जो दिले-मुज़्तर को फूँक कर,
बुझती है आरज़ू के भरे घर को फूँककर।

स्वामी जो तुम हो साथ तो कैसा अलम-कदा ?
ख़स-पोश झोंपड़ा मुझे होगा सनम-कदा।
सूरत तुम्हारी देखके ग़म भूल जाऊँगी,
सहरा के सारे रंजो-अलम भूल जाऊँगी।



भलाई का पैग़ाम

महाराज बहादुर 'बर्क़' देहलवी

बता ए ख़ाक के पुतले कि दुनिया में किया क्या है ?
बता कै दाँत हैं मुँह में तेरे, खाया-पिया क्या है ?
बता ख़ैरात क्या की, राहे-मौला में दिया क्या है ?
यहाँ से आक़बत के वास्ते तोशा लिया क्या है ?
दुआएँ लीं, कभी ठण्डा किया दिल तफ़्तः जानों का ?
हुआ है तू कभी राहत-रसाँ तिशना-दहानों का ?

शरीके दर्द-दिल होकर किसी का दुख मिटाया है ?
मुसीबत में किसी आफ़तज़दा के काम आया है ?
पराई आग में पड़कर कभी दिल भी जलाया है ?
किसी बेकस की ख़ातिर जान पर सदमा उठाया है ?

कभी आँसू बहाये हैं किसी की बदनसीबी पर ?
कभी दिल तेरा भर आया है मुफ़्लिस की ग़रीबी पर ?॥

किया है ग़मग़लत बरसों रबाबो-चंग से तूने,
मज़े लूटे, किया दिलशाद किस किस ढंग से तूने।
सुने दिल-सोज़ नग़मे साज़े-ख़ुश-आहंग से तूने,
बुझाई तिशनाकामी आबे-आतिश-रंग से तूने।
न छोड़ा, पर न छोड़ा तूने शग़ले-जामो-मीना को,
सितम है, बे-नवा तरसा किए नाने-शबीना को ॥

ज़रा तो सोच ऐ ग़ाफ़िल! रहेगा शादमाँ कब तक?
करेगा ख़ून अपने वक़्त का ना-क़द्रदाँ कब तक?
तेरे बाग़े-जवानी में न आएगी ख़िज़ाँ कब तक?
रहेगा तेरी क़िस्मत से मुवाफ़िक़ आसमाँ कब तक?
रहेगा ताबके मसरूफ़ दुनिया के झमेले में?
कहाँ तक खोयेगा उम्रे-रवाँ पानी के रेले में?

न दौलत साथ जायगी न हशमत साथ जायगी,
न शौकत साथ जायगी न रफ़अत साथ जायगी।
पसे-मुर्दन न यह शाने-इमारत साथ जायगी,
न अज़मत साथ जायगी न दौलत साथ जायगी।

जो पूछे जायंगे महशर में वो ऐमाल हैं तेरे,
अगर कुछ साथ जायेंगे तो वो अफ़आल हैं तेरे ॥



नौवारिदे-हस्ती

तिलोकचन्दजी 'महरूम'

ऐ ! कि अपने साथ घर भर की ख़ुशी लाया है तू ,
किस वतन की याद में रोता हुआ आया है तू ?
कौन सी दुनिआए-ख़न्दाँ याद आती है तुझे,
रोनेवाले ! याद किस किसकी रुलाती है तुझे ?
क्या कोई ज़र्रीं जज़ीरा छोड़कर आया है तू ,
गुलशने-फ़िरदौस से मुँह मोड़कर आया है तू ।
याद ऐसे ही तो कुछ आते हैं नज़्ज़ारे तुझे,
अजनबी-से इस जहाँ के नक़्श हैं सारे हुए ।
किस लिए हैरत से यूँ हर इक का मुँह तकता है तू ,
कुछ तो कहना चाहता है, कह नहीं सकता है तू ।

हमको भी मालूम है, तू है मुसाफ़िर दूर का,
मुल्कन इस देस की बोली से है ना-आशना।
हाँ! बता वो सरज़मीने आक़ियत थी कौन-सी?
बस्ती है दिल में तेरे दिलख़्वाह बस्ती कौन-सी?

रोशनी होती है कैसी चाँद सूरज की वहाँ?
तेरे चेहरे पर हवैदा हैं अभी जिसके निशाँ।
किस क़दर है पाको-रोशन! किस क़दर प्यारा है तू॥
किस चमन का गुल है तू? किस अर्श का तारा है तू?
आह! ऐ नौवारिदे-हस्ती! तुझे मालूम क्या?
इन्क़िलाबाते-ज़माना हैं मचाते धूम क्या?
आज रोता है तू जिस दुनियाँ को ज़िन्दा जानकर,
कल न छोड़ेगा इसी को बाग़े-रिज़्वां जानकर।
इस कदर मानूस हो जायेगा इस दुनियाँ से तू,
फिर वतन की याद होगी औ न उसकी आरज़ू॥

याद भूले से न आयेगा तुझे अपना वतन,
तू समझ लेगा इसी ग़ुर्बत को ही प्यारा वतन।
हासिल एक दिन भी न होगा गरचे इत्मीनाने दिल,
फिर भी दुनिया ही रहेगी शामिले-अरमाने-दिल॥

मीठी लोरी

डाक्टर सईद अहमद साहब 'सईद' बरेलवी

लाड़ले बापके, अम्मा के दुलारे सो जा,
ऐ मेरी आँख के तारे, मेरे प्यारे सो जा।
गोद में रोज जो रातों को सुलाती है तुझे,
मीठी वो नींद तेरी, देख, बुलाती तुझे ॥

दबके सोते में वो करवट से कहीं टूट न जाय,
ला मैं अलमारी में रख दूँ तेरा घोड़ा, तेरी गाय।
फूल बाग़ों से तेरे वास्ते चुनकर लायी,
जा मेरी जान ! वो लेने तुझे परियाँ आयीं ॥

बन्द रख पलकों की डिबिया में ये हीरे अनमोल,
माँ तेरी कुर्बान बस अब आँख न खोल।
सो ले जब तक नहीं आते हैं तेरे काम के दिन,
और दो चार बरस हैं अभी आराम के दिन ॥

फिर तो ये फ़िक्र पड़ेगी कि सबक़ याद करें,
मुफ़्त सो सोके न यूँ वक़्त को बरबाद करें।
होगा इस नन्हें से दिल में फ़िक्रों का हुजूम,
दिन तो दिन, रात को भी चैन से सोना मालूम ॥

ले बहुत देर हुई अब मुझे गाते, सो जा।
ऐ मेरे चाँद ,मेरे नींद के माते ! सो जा ॥

स्नेहलता

(बंगाल की एक सच्ची घटना)

सैय्यद अहमद हुसैन, 'अमजद'

एक लड़की थी कहीं स्नेहलता। जिसका सिन था तेरा-चौदा साल का॥

दिलरुबा अन्दाज़, मुखड़ा चाँद-सा।
देखता कोई तो कहता वर भला॥
'सेहर दारद नर्गिसे जादूए तो।
कर्द संबुल रा परेशाँ मूए तो॥'

देखकर उसका शबाबो-सिन व साल। बाप को आता था शादी का ख़्याल॥

था मगर इफ़्लास से आशुफ़्ता।
सख़्त था यह लड़केवाले का सवाल॥
माँगते थे वह कम अज़ कम दो हज़ार।
किस तरह बेकस उठा सकता ये वार॥

चाहता था बेच दे रहने का घर। झोंपड़े में ज़िन्दगी कर ले बसर॥

वार जो कुछ हो उठाये अपने सर।
दस्तगीरे-बेकसा है ईशवर॥

ज़िन्दगी जैसे बने कट जायगी ।
वरना इज़्ज़त चार में घट जायगी ॥
मिलके एक दिन शौहरो-ज़न साथ साथ ।
करते थे स्नेहलता की शादी की बात ॥
कहते थे इफ़्लास में है मुश्किलात । आबरू इन्सों की है दौलत के हाथ ॥
पास पर्दे के थी स्नेहलता खड़ी ।
बात उनकी कान में उसके पड़ी ॥
आ गयी सन्नाटे में इक-दो घड़ी ।
थी मगर छुटपन में ही फ़हमीदा बड़ी ॥
सोचकर कुछ आ गयी अपनी जगह। आह,वह गश खा गयी अपनी जगह॥
उठके फिर बिस्तर से वह कहने लगी—।
आह तुफ़ है ज़िन्दगानी पर मेरी ॥
मेरी ख़ातिर बाप पर बिपता पड़ी ।
आह मैं कम्बख़्त क्यों पैदा हुई ॥
बाप पर टूटे सितम मेरे लिए । वह उठाये रंज-ग़म मेरे लिए ॥
बीस सौ हो कम से कम मेरे लिए ।
बेचकर घर दे रक़म मेरे लिए ॥
उनसे कह दे कोई अज़राहे-करम ।
अब वो बेटी का करे किरिया-करम ॥

सर पै रोग़न डालकर जलने लगी।
शमअ थी काफ़ूर की, गलने लगी॥
ज़िन्दगी की दोपहर ढलने लगी।
हाथ ग़म से मौत भी मलने लगी॥ [तमाम।

हो गयी जल-भुन के ठंडी सोला-फ़ाम। चाँद सी सूरत हुई आख़िर



लड़कियों से

पंडित ब्रजनारायण 'चकबस्त'

रविशे-ख़ाम पै मर्दों की न जाना हर्गिज़,
दाग़ तालीम में अपनी न लगाना हर्गिज़॥
नाम रखा है नुमाइश का तरक़्क़ी व रिफ़ार्म,
तुम इस अन्दाज़ के धोके में न आना हर्गिज़॥

रंग है जिनमें मगर बूए-वफ़ा कुछ भी नहीं,
ऐसे फूलों से न घर अपना सजाना हर्गिज़॥
ख़ुद जो करते हैं ज़माने की रविश को बदनाम;
साथ देता नहीं ऐसों का ज़माना हर्गिज़॥

पूजने के लिए मन्दिर जो है आज़ादी का,
उसको तफ़रीह का मरकज़ न बनाना हर्गिज़ ॥
अपने बच्चों की ख़बर क़ौम के मर्दों को नहीं,
ये हैं मासूम इन्हें भूल न जाना हर्गिज़ ॥

इनकी तालीम का मक़तब है तुम्हारा जानू ,
पास मर्दों के नहीं, इनका ठिकाना हर्गिज़ ॥
काग़ज़ी फूल विलायत के दिखाकर उनको,
देस के बाग़ से नफ़रत न दिलाना हर्गिज़ ॥

नग़माये-क़ौम की लय जिसमें समा ही न सके,
राग ऐसा कोई इनको न सिखाना हर्गिज़ ॥
गो बुज़ुर्गों में तुम्हारे न हो इस वक़्त का रंग,
इन जईफ़ों को न हँस-हँस के रुलाना हर्गिज़ ॥

हम तुम्हें भूल गये, इसकी सज़ा पाते हैं ।
तुम ज़रा अपने तईं भूल न जाना हर्गिज़ ॥



प्यासी नदी

शब्बीर हसन ख़ाँ साहब 'जोश', मलीहाबादी

ऐ बिरादर ! पुल पै जब गंगा के आ जाती है रेल;
फेंकता है किसलिए सिक्के, ये क्या करता है खेल ?
क़ौम की आँखों से ज़ारी हैं लहू की नद्दियाँ;
डूबने ही पर है जिनमें इज़्ज़ते-हिन्दोस्ताँ ॥

क्यों नहीं करता है उस ख़ून की नद्दी का पास;
जिसको गंगा से कहीं बढ़-चढ़ के है सिक्कों की प्यास ।
डूबकर गंगा में इक पैसा उभर सकता नहीं;
हिन्द की आँखों का आँसू खुश्क कर सकता नहीं ॥

कार-आमद है जो आबे-ज़िन्दगानी की तरह;
तू बहा देता है उस दौलत को पानी की तरह ।
देखकर तेरी यह नादानी, ये कारे-नासवाब;
शर्म के मारे हुई जाती है गंगा आब-आब ॥

बाज़ुए-ज़र ! नाख़ुदाई के लिये तैयार हो;
डूबनेवाली है क़श्ती क़ौम की हुशियार हो ।
की गयी ना-वक़्त कुर्बानी तो फिर क्या फ़ायदा;
सर से ऊँचा हो गया पानी तो फ़िर क्या फ़ायदा ॥

सारा हिन्दुस्तान हमारा

समदयार ख़ाँ 'सागर निज़ामी'

दावा है हर आन हमारा।
सारा हिन्दुस्तान हमारा॥
जंगल औ गुलज़ार हमारे। दरिया औ कुहसार हमारे॥
कूचे औ बाज़ार हमारे। फूल हमारे, ख़ार हमारे॥
हर घर, हर मैदान हमारा।
सारा हिन्दुस्तान हमारा॥
गो नहीं हममें फ़ौजी कुव्वत। फिर भी बहुत है दिल में हिम्मत॥
और हमारे साथ है क़ुदरत। अब कोइ ताक़त, कोई हुकूमत— ॥
रोक तो दे तूफ़ान हमारा।
सारा हिन्दोस्तान हमारा॥
इससे भारत की रौनक़ है। आज़ादी दिन-रात सबक़ है।
अपनी धनुक है, अपनी शफ़क़ है। हर ज़र्रे पर अपना हक़ है॥
खेत अपने, दहक़ान हमारा।
सारा हिन्दुस्तान हमारा॥
मंदिर, मसजिद औ मैख़ाना। बादा, साग़र औ पैमाना।
जंगल, बस्ती औ वीराना। हर महफ़िल औ हर काशाना॥

हर दर, हर ऐवान हमारा ।
सारा हिन्दुस्तान हमारा ॥

गो पामाल है अपनी हस्ती । हर सू है पस्ती ही पस्ती ।
तन आसानी ऐश-परस्ती । दिन भर फ़ाक़ा, शब भर मस्ती ॥

है यह मगर ईमान हमारा ।
सारा हिन्दुस्तान हमारा ॥

हिन्द का मालिक हर हिन्दी हो । सिर्फ़ यहाँ एक क़ौम बसी हो ।
बार न पाए ख़ाह कोई हो । चाहे वो अपनी ही ख़ुदी हो ॥

देख ज़रा अरमान हमारा ।
सारा हिन्दुस्तान हमारा ॥



राम

समदयार ख़ाँ 'साग़र निज़ामी'

भारत प्यारा, राज दुलारा। कौशल्या की आँख का तारा।
लम्बी बाहें, रंग सलोना। मुतलक़ कुन्दन, ख़ालिस सोना।
आँखें ताज़ा फूल कँवल के। कोमल-कोमल, हल्के-हल्के।
अबरू दो शक्ती की कमानें। खिंच-खिंच जाएँ चढ़-चढ़ जाएँ।
सुन्दर-सुन्दर मोहनी सूरत। सर ता पा इश्क़ हुस्न की मूरत।
सरजू जिसका गहवारा थी। गंगा आँखों का तारा थी।

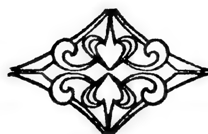
भारत प्यारा, राजदुलारा——।
कौशल्या की आँख का तारा॥

दिल का त्यागी, रूह का रसिया। ख़ुद राजा औ ख़ुद ही परजा।
सब से उल्फ़त करनेवाला। क़ौल का सच्चा, बात का पक्का।
एक अमर पैग़ामे-मुहब्बत। सर ता पा इल्हामे-मुहब्बत।
ध्यान की गंगा उससे फूटी। ज्ञान की जमना उससे फूटी।
सच्चाई का परचम था वो। प्रेम का बाँका बालम था वो।
रूप में उसके कौन आया था। कह दूँगा तो झगड़ा होगा।

भारत प्यारा, राज दुलारा——।
कौशल्या की आँख का तारा॥

रूहे-शुजाअत,जाने-शुजाअत । आने-शुजाअत,शाने-शुजाअत ।
सब के दुख पर रोनेवाला । दुखियों से खुश होनेवाला ।
शिव के बाण को जीता जिसने । जीती सुन्दर सीता जिसने ।
वो सीता जो हूर थी मुतलक़ । नूर थी मुतलक़, हूर थी मुतलक़ ।
अदल का पैकर,रहम की दुनिया । शक्ती औ भक्ती का सितारा ।
दोश पर इक अनवार की चादर । घूंघरवाले बाल मुकुट पर ।

भारत प्यारा, राज दुलारा—।
कौशल्या की आँख का तारा ॥



गाँधी

समदयार खाँ 'साग़र निज़ामी'

कैसा सन्त हमारा गाँधी ! कैसा सन्त हमारा !!
दुनिया थी गो उसकी बैरी, दुश्मन था जग सारा ।
आख़िर में जब देखा साधो वो जीता जग हारा ।

कैसा०........

बुद्ध है या ये नए जनम में बन्सी का मतवारा ।
मोहन नाम सही पर साधो रूप वही है सारा ॥

कैसा०........

भारत के आकाश पै वो है एक चमकता तारा ।
सचमुच ज्ञानी, सचमुच मोहन, सचमुच प्यारा प्यारा ॥

कैसा०........

सच्चाई के नूर से उसके दिल में है उजियारा ।
बातिन में शक्ती ही शक्ती ज़ाहिर में बेचारा ॥
कैसा सन्त हमारा गाँधी ! कैसा सन्त हमारा !!



प्यासे सामंत की लड़ाई

सय्यद अनवर हुसैन साहब 'आरज़ू', लखनवी

तपते बन में रहे प्यासे तो ये सूखा पानी ।
बच्चे रोए भी तो आँखों से न निकला पानी ॥
बेबसी देख के अब्बास का जी बैठ गया ।
प्यासी बच्ची ने जो मुँह फोड़ के माँगा पानी ॥

रन में घोड़ा जो उड़ाते हुए पहुँचे अब्बास ।
चौकियाँ घाट पै बैठी थीं, रुका था पानी ॥
वो धुआँधार घटा छायी हुई ढालों की ।
आग जिससे कि बरस पड़ती है, कैसा पानी ?

बरछियाँ ताने बढ़े आगे लहू के प्यासे ।
हो जिन्हें देखके पत्थर का कलेजा पानी ॥
वो लचकती हुई डाँडें, वो चमकते हुए फल ।
धूप से और भी खौला हुआ जिसका पानी ॥

एक से एक कहता था कि हाँ भाइयो, हाँ ।
इस जगह आज लहू होके बहेगा पानी ॥
मनचला ऐसा कभी काहे को देखा होगा ।
लेने आया है जो इतनों से अकेला पानी ॥

इस लड़ाई में यही जीत की कुंजी है—।
"मरते-मरते किसी प्यासे को न देना पानी ॥"
"हम हैं लाखों ये अकेला है, बना सकता है क्या ।
सूरमा भी है तो हो ले, ले नहीं सकता पानी" ॥

घात से हाथ चले ऐसी मँजी चोटों के ।
माँगता ही नहीं जिन चोटों का मारा पानी ॥
'बे-धड़क बागें उठावें' जो यह कहकर सबने ।
देखा, अब सर से हुआ जाता है ऊँचा पानी ।

बल पड़े तेवरों पर, हो गयी चितवन कुछ और ।
तमतमाने लगा मुँह, माथे से टपका पानी ॥
खिंच के बाहर हुई काठी से तड़पती नागन ।
लहरें लेने लगा, तलवार का ठहरा पानी ॥

छेड़ जैसे ही हुई, आपने भी तान ली बाग ।
टाप घोड़े ने जो मारी, निकल आया पानी ॥
पहले ही वार में रेती पर लहू यों बरसा ।
जैसे आयी हुई बरसात का पहला पानी ॥

जो थे सामन्त बड़े उनके भी जी छूट गये ।
मनचलों का भी हुआ डर से कलेजा पानी ॥

कहती थीं सामने नदी के तड़पती लाशें।
ये वो दिन हैं कि लहू मे भी है महँगा पानी ॥
आगे जो बढ़ रहे थे उनके उखड़ने लगे पाँव।
जैसे टकरा के पलट जाता है चढ़ता पानी ॥

आन की आन में लाखों का डुबोया बेड़ा।
नहीं देखा किसी तलवार का ऐसा पानी ॥
लड़के जब छीन लिया घाट तो चिल्लाके कहा—।
'अब तुम्हारा है ये पानी कि हमारा पानी ॥'

तीन दिन हो गये थे बून्द नहीं थी घर में।
औ यहाँ सामने आँखों के था गहरा पानी ॥
प्यासे बच्चों का बिलखना नहीं भूला था।
उट्ठा छाती से धुआँ, आँख से टपका पानी ॥

लहरें सूखे हुए होठों से बहुत शरमायीं।
थम गया देखके मुँह प्यासे का, बहता पानी ॥
डबडबाई हुई आँखों से भँवर तक ने लजा।
भरके ले आए सब एक-एक कटोरा पानी ॥

वो पसीने पै अपना लहू बहानेवाला।
बे-पिलाए हुए क्या पीता अकेला पानी ॥

छोड़ दी घोड़े की बाग और कहा 'तू पी ले ।
मुँह मेरा तकता है क्या, मैं न पियूंगा पानी ॥'

उसने भी आती हुई लहर को ठोकर मारी ।
कि कलेजे को जलाने लगा ठंडा पानी ॥
इतने में रोकने को आ गये फिर ग़ोल के ग़ोल ।
कहते जाते थे कि ले जाने न देना पानी ॥

आप भी हो गये घोड़े पै संभल कर तैयार ।
ले लिया डोलची में जितना समाया पानी ॥
फिर खिंची म्यान से तलवार, चले वार पै वार ।
घाट पर लाल लहू से हुआ सारा पानी ॥

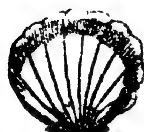
खेत ऐसा ये पड़ा है जो न भूलेगा कभी ।
यहाँ पानी था लहू और लहू था पानी ॥
फिर भी लाखों से अकेले की लड़ाई कब तक ?
धूप, लू, प्यास, थकन और न पीना पानी ॥

थड़जिए घात लगाने लगे पीछे छुपकर ।
सामने आने में होता था कलेजा पानी ॥
वार भर पूर चले, घाव भी गहरे आये ।
बह गया इतना लहू, लाये थे जितना पानी ॥

कट गए हाथ भी, जीने की भी सब आस नहीं ।
आप बच सकते न थे कौन बचाता पानी ॥
हाथ आने में हुआ जिसके लहू पानी एक ।
आँख से अपनी वो बहते हुए देखा पानी ॥

आप घोड़े से गिरे 'हाय सकीना' कहकर ।
सोच ये था कि भतीजी को न पहुँचा पानी ॥
आप मिट सकता है लिक्खे को मिटा सकता है कौन ?
हाय, पीना ही न प्यासों को बदा था पानी ॥

हिचकी इक आयी, लबें फिरने लगीं, साँस उखड़ी ।
नील आँखों का ढला, माथे से टपका पानी ॥
'आरज़ू' डूब के जब थाह लगाये तो खुले ।
उथली नद्दी में न होने पै है कितना पानी ॥



झूठी प्रीत

एहसान दानिश

जग की झूठी प्रीत है लोगो, जग की झूठी प्रीत !

पापिन नगरी, काली नगरी,
धरम दया से ख़ाली नगरी,
पाप से पलनेवाली नगरी,
पाप यहाँ की रीत ।

जग की झूठी प्रीत है लोगो, जग की झूठी प्रीत !

फ़ानी है यह दुनिया, फ़ानी,
उठती मौजें, बहता पानी,
छोड़ भी इसकी राम कहानी,
किसकी हुई यह मीत ?

जग की झूठी प्रीत है लोगो, जग की झूठी प्रीत !

मोह के दिन हैं, दुख की रातें,
लोभ के फंदे, पाप की घातें,
प्रेम के रस से ख़ाली बातें,
हार यहाँ की जीत ।

जग की झूठी प्रीत है लोगो, जग की झूठी प्रीत !

दूसरी बहार

बादल

मौलाना मुहम्मद हुसैन 'आज़ाद'

आने से तेरे आ गया आँखों में नूर है।
दीवारो-दर से आज बरसता सुरूर है।
तेरे ही दम-क़दम की ये सब लहर-बहर है,
सैराब को हो दश्त तो शादाब शहर है।

ऐ अब्र ! सब ये साज़ो-नवा तेरे दम से है,
ये लुत्फ़े-ऐश, लुत्फ़े-हवा तेरे दम से है।
गुंचों के मारे प्यास के थे मुँह खुले हुए,
गुलशन के नौनिहालों के मनके ढले हुए।

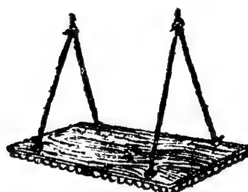
यों फूटकर जो हैं गुलो-रैहाँ निकल पड़े,
क्या जाने किन दिलों के हैं अरमाँ निकल पड़े।
ऐ अब्र, तू तो छाया हुआ है जहान पर,
छाया हुआ समा है ज़मीं आसमान पर।

चलना वो बादलों का ज़मी चूम चूमकर,
और उठना आसमाँ की तरफ़ झूम झूमकर।
बिजली को देखो आती है क्या कौंधती हुई,
सब्ज़े को ठंडी-ठंडी हवा रौंदती हुई।

आती इधर सबा है, उधर है नसीम भी,
और उनके साथ साथ है आती शमीम भी।
झूलों पे नौजवान हैं पेंगे बढ़ा रहे,
और बच्चे आम के हैं पपीहे बजा रहे।

सावन के गीत उठा रहे तूफ़ाँ दिलों में हैं,
परदेसियों की याद के अरमाँ दिलों में हैं।
हर तान में मल्हार के मस्ती का शोर है,
बादल गरजके पर्दे में देता टिकोर है।

क्या क्या बयाँ करूँ मैं तेरी रात का मज़ा,
गर रात का मज़ा है तो बरसात का मज़ा।
सुनसान रात और वो आयी हुई घटा,
चारों तरफ़ जहान में छायी हुई घटा।



गर्मी

मौलाना मुहम्मद हुसैन 'आज़ाद'

मुँह पर ज़मीं के देखो तो है ख़ाक उड़ रही,
और गर्द ज़ार सू तहे-अफ़लाक उड़ रही।
दुनिया में बूँद बूँद को ख़िलक़त तरस रही,
पानी की जा है आग फ़लक से बरस रही।
शहरों में सूख सूख के जंगल चमन हुए,
औ जंगलों में धूप से काले हिरन हुए।
सीमाब होके सीने से हर दिल निकल चला,
और आफ़ताब शमअ की सूरत पिघल चला।



चौपदे

ख़्वाजा अलताफ़ हुसैन 'हाली'

जो लोग हैं नेकियों में मशहूर बहुत,
हों नेकियों पर अपनी न मग़रूर बहुत।
नेकी ही ख़ुद इक बदी है गर न हो ख़ुलूस,
नेकी से बदी नहीं है कुछ दूर बहुत॥

ज़ाहिद कहता था—जान है दीन पर क़ुर्बान,
पर आया जब इमतहाँ की ज़द पर ईमान।
की अर्ज़ किसी ने 'कहिये अब क्या है सलाह ?',
फ़र्माया कि भाईजान 'जी है तो जहान॥'

है इश्क़ तबीब, दिल के बीमारों का,
या घर है वो ख़ुद हज़ार आज़ारों का।
हम कुछ नहीं जानते, पर इतनी है ख़बर,
इक मशग़ला दिलचस्प है बे-कारों का॥

बस बसके हज़ारों घर उजड़ जाते हैं,
गड़ गड़के अलम लाखों उखड़ जाते हैं।
आज इसकी है नौबत तो कल उसकी बारी,
बन बनके यूँही खेल बिगड़ जाते हैं॥

सहरा में जो पाया एक चटियल मैदान,
बरसात में सब्ज़ा का न था जिस पै निशान।
मायूस थे जिसके जोतने से दहक़ान,
याद आयी हमें क़ौम के अदबार की शान॥

है जान के साथ काम इन्साँ के लिए,
बनती नहीं ज़िन्दगी में बे-काम किए॥
जीते हो तो कुछ कीजिये ज़िन्दों की तरह,
मुर्दों की तरह जिए तो क्या ख़ाक जिए॥

क्या फ़र्क़, समाअत न हो जब कानों में,
दानाई की बातों में और अफ़सानों में।
गुरबत में है अजनबी मुसाफ़िर जिस तरह,
दाना का यही हाल है नादानों में॥

धोने की है ऐ रिफ़ारमर जा बाक़ी,
कपड़े पै है जब तलक कि धब्बा बाक़ी।
धो शौक़ से कपड़े को, पै इतना न रगड़,
धब्बा रहे कपड़े पै न कपड़ा बाक़ी॥

अब ज़अफ़ के पंजे से निकलना मालूम,
पीरी का जवानी से बदलना मालूम।

खोयी है वो चीज़ जिसका पाना मुहाल,
आता है वो वक़्त जिसका टलना मालूम ॥

वाइज़ ने कहा कि वक़्त सब जाते हैं टल,
इक वक़्त से अपने नहीं टलती है तू अजल।
की अर्ज़ ये इक सेठ ने उठकर कि हुज़ूर,
है टैक्स का वक़्त भी इसी तरह अटल ॥



चन्द शेर

अकबर हुसैन साहिब 'अकबर' इलाहाबादी

मशरक़ी घर की मुहब्बत का मज़ा भूल गये।
खाके लन्दन की हवा अहदे-वफ़ा भूल गये ॥
पहुँचे होटल में तो फिर दर्द की परवा न रही।
केक को चखके सेवइयों का मज़ा भूल गये ॥

मोम की पुतली पर पिघली तबीयत ऐसी।
चमने-हिन्द की परियों का मज़ा भूल गये ॥
नक़्ले-मग़रिब की तरंग आयी तुम्हारे दिल में।
और ये नुक़्ता कि "मेरी अस्ल है क्या" भूल गये ॥

क्या तअज्जुब है जो लड़कों ने भुलाया घर को।
जब कि बूढ़े रविश-दीने-खुदा भूल गये ॥

नई तालीम को क्या वास्ता है आदमीयत से।
जनाबे डारविन को हज़रते-आदम से क्या मतलब ॥
इल्मो-हिकमत में हो अगर ख़ाहिशे फ़ेम(Fame),
सरकार की नौकरी को हरगिज़ न कर एम (Aim)।

अपनी मेहनत को अपना 'आनर' समझो,
अपने पाँवों को अपना मोटर समझो ॥
सोहबत अच्छी तो हर जगह है आराम।
अपने ही बदन को अपना तुम घर समझो ॥

हम ऐसी कुल किताबें क़ाबिले-ज़ब्ती समझते हैं।
कि जिनको पढ़के लड़के बाप को ख़ब्ती समझते हैं ॥

दिल छोड़कर ज़बान के पहलू पै आ पड़े।
हम लोग शायरी से बहुत दूर जा पड़े ॥
मज़हब छोड़ो, मिल्लत छोड़ो, सूरत बदलो, उम्र गँवाओ।
सिर्फ़ कलर्की की उम्मीद औ इतनी मुसीबत, तोबा, तोबा ॥

क़दमे-शौक़ बढ़े इनकी तरफ़ क्या अकबर।
दिल से मिलते नहीं ये हाथ मिलानेवाले ॥

बे-पास के तो सास की भी अब नहीं है आस ।
मौकूफ़ शादियाँ भी हैं अब इम्तहान पर ॥

इनको क्या काम है मुरव्वत से ।
अपने रुख़ से यह मुँह न मोड़ेंगे ॥
जान शायद फ़रिश्ते छोड़ भी दें ।
डाक्टर फ़ीस तो न छोड़ेंगे ॥

शेख़ साहब का तअस्सुब है जो फ़रमाते हैं ।
'ऊँट मौजूद है फिर रेल पै क्यों चढ़ते हो ?'
हुकूमत उसकी,उसी की मर्ज़ी,उसी के सब काम धंधे ।
कहाँ के इंग्लिश, कहाँ के नेटिव, ख़ुदा की दुनिया, ख़ुदा के बन्दे ॥

देखता है इक उम्र से बन्दा,
बस यही बातें औ यही फन्दा ।
होता है कुछ काम न धन्धा,
'लाओ चन्दा' 'लाओ चन्दा' ॥

रही रात एशिया गफ़लत में सोती ।
नज़र युरूप की काम अपना किया की ॥
रिजल्यूशन की शोरिश है मगर उसका असर ग़ायब ।
प्लेटों (Plates) की सदा सुनता हूँ औ खाना नहीं आता ॥

कैसी नमाज़, 'बॉल' में नाचो जनाबे-शेख़ ।
तुम को ख़बर नहीं कि ज़माना बदल गया ॥
मेरी तक़रीर का उस बुत पै कुछ काबू नहीं चलता ।
जहाँ बन्दूक़ चलती है वहाँ जादू नहीं चलता ॥

ईमान बेचने पर हैं सब तुले हुए ।
लेकिन ख़रीद हो जो अलीगढ़ के भाव से ॥
है गुदाम आपका, मसजिद की ज़रूरत क्या है ?
पेट तो है, दिल आगाह नहीं है, न सही ॥

शेख़ जी के दोनों बेटे बा-हुनर पैदा हुए ।
एक हैं ख़ुफ़िया पुलिस में, एक फ़ाँसी पड़ गये ॥
आगे इंजन के दीन है क्या चीज़ ?
भैंस के आगे बीन है क्या चीज़ ॥

सुनते नहीं हैं शेख़ नयी रोशनी की बात ।
इंजन की इनके कान में अब भाप दीजिये ॥
मक्का तक रेल का सामान हुआ चाहता है ।
अब तो इंजन भी मुसलमान हुआ चाहता है ।

मज़हबी बहस मैंने की ही नहीं ।
फ़ालतू अक़्ल मुझ में थी ही नहीं ॥

यह बात ग़लत है कि मुल्के-इस्लाम है हिन्द।
यह झूठ कि मुल्के-लछमनो-राम है हिन्द॥
हम सब हैं मतीओ-ख़ैर-ख़्वाहे-इंग्लिश।
यूरप के लिए बस एक गोदाम है हिन्द॥

न कुछ इन्तज़ारे-नज़र कीजिये।
जो अफ़सर कहें बस वो झट कीजिये॥
कहाँ का हलाल और कैसा हराम?
जो साहब खिलाएँ वो चट कीजिये॥

पूछते क्या हो कि तू 'पीरू' है या 'हरबंस' है।
बन्दा जो कुछ हो बहर-हालत बिला लैसंस है॥

शेख़ जी अपनी-सी बकते ही रहे
वो थियेटर में थिरकते ही रहे॥

हुए इस क़दर मुहज़्ज़ब कभी घर का मुँह नहीं देखा।
कटी उम्र होटल में, मरे अस्पताल जाकर॥
पाकर ख़िताब नाच का भी ज़ौक़ हो गया।
'सर' हो गये तो 'बॉल' का भी शौक़ हो गया॥

आदत जो पड़ी हो हमेशा से वो दूर भला कब होती है?
रखी है चिनौटी पाकेट में पतलून के नीचे धोती है॥

जो चाहते हैं कटे उम्र एतदाल के साथ।
चिठा रहे हैं वो बिस्कुट का जोड़ दाल के साथ॥

चीज़ वो है बने जो युरप में
बात वो है जो 'पायोनियर' में छपे॥

राहे-मग़रिब में ये लड़के लुट गये।
वाँ न पहुँचे और हमसे छुट गये॥

हरचन्द कि कोट भी है, पतलून भी है।
बंगला भी है, 'पॉट' भी है, साबून भी है॥
लेकिन मैं तुझसे पूछता हूँ हिन्दी!
युरप का तेरी रग़ों में कुछ ख़ून भी है?

शौक़े-लैलाए-सिविल-सर्विस ने मुझ मज़नून को।
इतना दौड़ाया, लंगोटी कर दिया पतलून को॥

कहता हूँ मैं हिन्दू-मुसलमाँ से यही,
अपनी अपनी रविश पै तुम नेक रहो।
लाठी है हवाए-दहर पानी बन जाओ,
मौजों की तरह लड़ो मगर एक रहो॥

नामा कोई न यार का पैग़ाम भेजिये,
इस फ़स्ल में जो भेजिये बस आम भेजिये।
ऐसे ज़रूर हों कि जिन्हें रख के खा सकूँ,
पुख़्ता अगर हों बीस तो दस ख़ाम भेजिये।

मालूम ही है आपको बन्दे का ऐडरेस ,
सीधे इलाहाबाद मेरे नाम भेजिये।
ऐसा न हो कि आप यह लिक्खें जवाब में ,
तामील होगी, पहले मगर दाम भेजिये।



बन्दा तेरा

महाराजा सर कृष्ण प्रसाद 'शाद'

उसने कहा—'काबा तेरा ?', मैंने कहा—'चेहरा तेरा।'
उसने कहा—'चेहरा तेरा ?', मैंने कहा—'जलवा तेरा॥'
उसने कहा—'जीना तेरा ?', मैंने कहा—'हस्ती तेरी।'
उसने कहा—'मरना तेरा ?', मैंने कहा—'पर्दा तेरा॥'
उसने कहा—'क्या काम है ?', मैंने कहा—'हर वक़्त दीद।'
उसने कहा—'क्या शग़ल है ?', मैंने कहा—'सौदा तेरा॥'
उसने कहा—'दिल क्या हुआ ?', मैंने कहा—'तूने लिया।'
उसने कहा—'क्या चोर हूँ ?' मैंने कहा—'ग़मज़ा तेरा ?'
उसने कहा—'मक़सद तेरा ?,' मैंने कहा—'तू ही तो है।'
उसने कहा—'क़िसमत तेरी ?', मैंने कहा—'मंशा तेरा॥'
उसने कहा—'ख़िदमत तेरी ?', मैंने कहा—'है बन्दगी।'
उसने कहा—'क्या नाम है ?', मैंने कहा—'बन्दा तेरा॥'

तपिश

बेनज़ीर शाह

हवा में तमाज़त का है वह असर।
कि उड़ते हैं ज़र्रे बरंगे-शरर ॥
न साया, न सब्ज़ा, न पानी कहीं।
दहकती हुई वो रेतीली ज़मीं ॥
बालू औ गर्मी, ख़ुदा की पनाह।
कि रेगे-बयाबाँ की हालत तबाह ॥
ज़मीं पर अगर रख दे लाकर कोई।
भरी मश्क भी सूख जाए अभी ॥

ज़रा भी अगर उस तरफ़ को उठे,
तो पाए-निगह में पड़े आबले।
परिन्दों का हो उस तरफ़ जो गुज़र,
बलन्दी से भुनकर गिरें ख़ाक पर ॥

घटा

बेनज़ीर शाह

घटा ऊदी ऊदी ये क्या छा गयी ?
बहारे-चमन रंग पर आ गयी ॥
परों को इधर मोर तौले हुए ।
घटायें उधर बाल खोले हुए ॥
वो कोइल ग़ज़ब नै बजाती हुई ।
पपीहों से तानें लड़ाती हुई ॥
हवा दोश पर शाल डाले हुए ।
घटाओं के आंचल संभाले हुए ॥

घटा में वो बगुलों की हरसू क़तार ।
कि ज़ुलमत में आबे-हयात आशकार ॥
सियाही में यह उजली उजली लकीर ।
रवाँ दामने-कोह में जूए-शीर ॥
ज़मीनो-फ़लक पर है मस्ती का शोर ।
गरज़ते हैं बादल कि चिल्लाए मोर ॥
कभी अब्र गिरयाँ कभी ख़न्दा ज़न ।
है दीवाने का स्वांग चर्ख़े-कुहन ॥

चोट

अमरनाथजी मदन 'साहिर', देहलवी

तार पर ज़ख़्म-सी जब आती है चोट ।
ज़मज़मा से दिल पै लग जाती है चोट ॥
रंग लाती है तबीयत ख़ुद-बख़ुद ।
जब हवादिस की वो खा जाती है चोट ॥
शीशये-नाज़ुक है, दिल की क्या बिसात ।
चूर हो जाता है, जब आती है चोट ॥
दिल ही दिल में चुटकियाँ लेता है इश्क़ ।
हर रगो-पै में समा जाती है चोट ॥

दर्द से जिस दम नफ़स रंगीं हुआ ।
हर सदा से दिल पै लग जाती है चोट ॥
दर्द-मन्दाने मुहब्बत के लिए ।
दिल को सोज़े-गर्म से गरमाती है चोट ॥

सोज़ से होती है आख़िर साज़गार ।
आह का मस्दर नज़र आती है चोट ॥
जब तबीई हो कहीं सोज़ो-गुदाज़ ।
तबए-मौज़ूँ में नज़र आती है चोट ॥
शेर-क्या है, 'आह' है या 'वाह' है ।
जिससे हर दिल की उभर आती है चोट ॥

शायरी 'साहिर' है शग़्ले-अहले-दिल ।
नग़्माए-तौहीद बन जाती है चोट ॥



जुगनू

डाक्टर सर शेख़ मुहम्मद इक़बाल

जुगनू की रोशनी है काशानए-चमन में,
या शमअ जल रही है फूलों की अंजुमन में ।
आया है आसमाँ से उड़कर कोई सितारा,
या जान पड़ गयी है महताब की किरन में ॥

या शब की सल्तनत में दिन का सफ़ीर आया,
ग़ुर्बत में आके चमका, गुमनाम था वतन में ।
तुकमा कोई गिरा है महताब की क़बा का?
ज़र्रा है या नुमायाँ सूरज के पैरहन में ॥

हुस्ने-क़दीम की यह पोशीदा इक झलक थी,
ले आयी जिसको कुदरत ख़िलवत से अंजुमन में ।
छोटे से चाँद में है ज़ुल्मत भी, रोशनी भी,
निकला कभी गहन से, आया कभी गहन में ॥

परवाना इक पतंगा, जुगनू भी इक पतंगा;
वह रोशनी का तालिब, यह रोशनी सरापा ।

'साहिर' के कुछ शेर

पं० अमरनाथजी मदन 'साहिर', देहलवी

बहरे-हस्ती में अज़ल से है रवाँ किश्तीए-तन;
बादबाँ कोई न अपना, है न लंगर अपना ॥

कैफ़े-मस्ती में अजब जल्वाए-यकताई था;
तू ही तू था, न तमाशा, न तमाशाई था ॥

तुझे ए जल्वा-आरा ! हमने हरसू जल्वागर देखा;
हमें तू ही नज़र आया, जहाँ देखा; जिधर देखा ॥

रज़ाए-यार में जब ख़म हुआ सरे-तसलीम;
न दिल, न दिल की तमन्ना से कोई काम रहा ॥

क़तरा वासिल होके दरिया में फ़ना हो जायगा ।
जब ख़ुदी मिट जायगी, बन्दा ख़ुदा हो जायगा ॥

सीना बे-कीना है औ क़ल्ब है रोशन मेरा;
दोस्त तो दोस्त है, दुश्मन नहीं दुश्मन मेरा ।

है सो है, मैं हूँ, न तू, और न तेरा मेरा;
काबा है दर मेरा, शेख़ो-बरहमन मेरा ॥

आरिफ़ों की नज़र में रहता है;
नक़्श बाक़ी जहाने-फ़ानी का ।
हमने देखा है चश्मे-इबरत से;
आदमी बुलबुला है पानी का ॥

था 'अनलहक़' लबे-मनसूर पै क्या आप से आप ?
था जो परदे में छुपा बोल उठा आप से आप ॥

नज़र-गाह तेरी है आईनाए-दिल;
तुझे हैरती हो के हम देखते हैं ॥
सैर कर आलमे-हस्ती की, मगर दिल न लगा ।
ये है इक दामे-अजल इसमें गिरफ़्तार न हो ॥

तुझे देखा नहीं है, पर याद है दिल में सदा तेरी;
ग़लत है "दूर जो आँखों से है वो दूर है दिल से ॥"

हर एक इन्सान की है क़द्र कौलो-फ़ेल से अपनी ।
करेगा दूसरा कब क़द्र जब हमने न की अपनी ॥



'इक़बाल' के चन्द शेर

डाक्टर सर शेख़ मुहम्मद इक़बाल

इन्तहा भी इसकी है आख़िर ख़रीदें कब तलक ?
छतरियाँ, रूमाल, मफ़लर, पैरहन जापान से ?
अपनी ग़फ़लत की यही हालत अगर क़ायम रही,
आयेंगे ग़स्साल काबुल से, कफ़न जापान से ॥

उठाकर फेंक दो बाहर गली में;
नई तहज़ीब के अंडे हैं गन्दे ।
इलेक्शन, मेम्बरी, कौंसिल, सदारत ;
बनाये ख़ूब आज़ादी के फन्दे ।
मियाँ नुज्जार भी छीले गये साथ ।
निहायत तेज़ हैं यूरप के रन्दे ॥

जान जाए, हाथ से जाये न सत;
है यही इक बात हर मज़हब का तत ।
चट्टे-बट्टे एक ही थैली के हैं ;
साहूकारी, बिस्वादारी, सल्तनत ॥



जौहर दिखाओ

मौलाना ज़फ़र अली ख़ाँ

अगर, तुमको हक़ से है कुछ भी लगाव,
तो बातिल के आगे न गरदन झुकाओ ॥
हुकूमत को तुमने लिया आज़मा;
अब अपने मुकद्दर को भी आज़माओ ॥

हो तुम जिसके ज़र्रे वो है ख़ाके-हिन्द;
छुपे हैं जो इसमें वो जौहर दिखाओ ॥
फ़लक पर महो-मिहर पड़ जायँ मन्द,
ज़मीं पर इस अंदाज़ से जगमगाओ ॥

हिमालय भी आ जाए गर राह में;
तो ठुकरा के आगे से उसको हटाओ ॥
ज़माने में रोशन करो नामे-हिन्द;
हर अक़लीम में इसका सिक्का चलाओ ॥

हर एक मुल्क का हाथ में लेके दिल;
हर एक क़ौम से अपनी इज्ज़त कराओ ॥
पुराना हुआ दफ़्तरी इक़्तदार;
समझ लो अब इसका भी है चल-चलाव ॥

किसी रोज़ ख़ुद ग़र्क़ हो जायगी यह ;
बहुत बह चुकी है, काग़ज़ की नाव ॥


'हसरत' के शेर

मौलाना हसरत मोहानी

बार बार आता है यह किसका ख़याल,
बे-ख़ुदी बतला मुझे क्या हो गया ?

नहीं आती, तो याद उनकी महीनों तक नहीं आती ;
मगर जब याद आते हैं तो अक्सर याद आते हैं।

बढ़ गईं तुमसे मिल कर और भी बेताबियाँ ;
हम यह समझे थे कि अब दिल को शकेबा कर दिया।

तेरी महफ़िल से उठाता ग़ैर मुझको, क्या मज़ाल ;
देखता था मैं कि तू ने भी इशारा कर दिया ।

रोग दिल को लगा, गयीं आँखें ;
इक तमाशा दिखा गयीं आँखें ।

उसने देखा था किस नज़र से मुझे ;
दिल में गोया समा गयीं आँखें ।
हाल सुनते वो क्या मेरा "हसरत"
वो तो कहिए सुना गयीं आँखें ।

शब वही शब है, दिन वही दिन हैं,
जो तेरी याद में गुज़र जायँ ।

रात भर उनके तसव्वर से हुआ की बातें ।
क्या ही आराम से गुज़री शबे-फ़ुर्क़त मेरी ।

शबे-ग़म किस आराम से सो गये हम,
फ़िसाना तेरी याद का कहते कहते ।

क्या कहूँ तुमसे मुद्दआ क्या है,
काश मैं ख़ुद ही जानता क्या है ।

वफ़ा तुझसे, ऐ बेवफ़ा ! चाहता हूँ ;
मेरी सादगी देख, क्या चाहता हूँ ॥



'फ़ानी' साहब के अशआर

शौकत अली खाँ 'फ़ानी'

आ गयी है तेरे बीमार के मुँह पर रौनक़ ;
जान क्या जिस्म से निकली, कोई अरमाँ निकला ॥

किसी के एक इशारे में किसको क्या न मिला ;
बशर को ज़ीस्त मिली, मौत को बहाना मिला ॥

दिल आप यार से रूदादे-ग़म कहे तो कहे ;
मेरी ज़बाँ से तो ये माजरा बयाँ न हुआ ॥

हूँ, मगर क्या? यह कुछ नहीं मालूम ;
मेरी हस्ती है ग़ैब की आवाज़ ॥

मेरी आँखों में आँसू हमदम क्या कहूँ क्या है ;
ठहर जाए तो अंगारा है, बह जाए तो दरिया है ॥



महात्मा गाँधी

सैयद आशिक हुसैन 'सीमाब' अकबराबादी

तसर्रुफ़ सारी दुनियाँ के दिलों पर कर लिया तूने ;
ज़माने को मुहब्बत से मुसख़्ख़र कर लिया तूने ।
किया तहलील तुझको यूँ तेरी फितरी-लताफ़त ने ;
कि आँखों से गुज़र कर रूह में घर कर लिया तूने ॥

तेरे क़दमों पै होते हैं निछावर सीमगूं टुकड़े ;
फ़सूँ का याद ऐसा डेढ़ अच्छर कर लिया तूने ।
तेरी 'जय' हो रही है हर तरफ़ वो कामराँ तू है ;
है जितना नातवाँ उतना ही क़िस्मत का जवाँ तू है ।



'अज़ीज़' के चुने शेर

मिर्ज़ा मुहम्मद हादी 'अज़ीज़'

हरेक क़दम तेरे कूचे में एक आलम है,
कहाँ तक मैं चलूँगा, चला नहीं जाता।

जबाँ बयान करे मुद्दआए-दिल क्यों कर;
किसी का हाल किसीसे कहा नहीं जाता॥

कोई तदबीर बन पड़ती नहीं, क्या होनेवाला है।
मुझे आसान होता काश! उन्हें दिल से भुला देना॥

पैदा वो बात कर कि तुझे रोएँ दूसरे;
रोना ख़ुद अपने हाल पै यह ज़ार ज़ार क्या?

सोज़े-ग़म से अश्क का एक एक क़तरा जल गया;
आग पानी में लगी ऐसी कि दरिया जल गया॥

हमारे चेहरे से क्या कुछ अयाँ नहीं होता;
तुम आप देख लो, हमसे बयाँ नहीं होता॥

यह ज़िन्दगी भी याद रहेगी ज़माने में;
मैं हूँ क़फ़स में, रूह मेरी आशियाने में॥

नया चमन

होंगे बदनाम तो हो लेने दो,
हमको जी खोल के रो लेने दो।
झूमता आता है बादल देखो;
दामन अश्कों से भिगो लेने दो॥

ऐ, मेरी क़ब्र पै चलनेवालो,
नींद भर मुझे सो लेने दो।
हिम्मते-इश्क़ ये कहती है 'अज़ीज़';
अब जो होती है, सो हो लेने दो॥

काम दुनिया में बहुत करना है; क़ब्ल मरने के हमें मरना है।
तुमको दिखलायेंगे दिल की तस्वीर; जा-बजा रंग अभी भरना है॥



बेबसी

मीरज़ा यास यगाना चंगेज़ी, लखनवी

चारा नहीं कोई जलते रहने के सिवा।
सांचे में फ़ना के ढलते रहने के सिवा॥
ऐ शमअ! तेरी हयाते-फ़ानी क्या है?
झोंका खाते, संभलते रहने के सिवा॥

दिल क्या है? इक आग है दहकने के लिए।
दुनिया की हवा खाके भड़कने के लिए॥
या गुंच: सरबस्ता चटकने के लिए।
या ख़ार है पहलू में खटकने के लिए॥

दुनिया के मज़े में डूबकर क्या तिरते।
आँखें रखते तो क्यों गढ़े में गिरते?
लो, देख लो, अब ऐश-परस्तों की दसा।
मुरदे देखे न होंगे चलते-फिरते॥

याराने-शबाब! रात कटने की है देर।
बुझता है कँवल, हवा पलटने की है देर॥
महफ़िल में झूमते रहोगे कब तक।
आँखें खुलने की, दिल उचटने की है देर॥

काबे से है आज अपना सफ़र और तरफ़ ।
मैं और तरफ़ हूँ रहबर और तरफ़ ॥
कैसे हरमो-दैर इधर हों न उधर ।
दिल और तरफ़ को है नज़र और तरफ़ ॥

दिल को हद के सिवा धड़कने न दिया ।
क़ालिब में रूह को फड़कने न दिया ॥
क्या आग थी सीने में जिसे फ़ितरत ने ।
रोशन तो किया मगर भड़कने न दिया ॥

किस काम का दिल जो हो ख़बर से ख़ाली ।
मुँह में है ज़बाँ मगर असर से ख़ाली ॥
इन अक्ल के अन्धों पै ख़ुदा ख़ैर करे ।
आँखें दो दो मगर नज़र से ख़ाली ॥

तक़दीर पै क्या ज़ोर है खोटी ही सही ।
बोटी न मिली तो रूखी रोटी ही सही ॥
चरखा तो चलाये-जाओ गाँधीजी का ।
धोती न सही, तन पै लंगोटी ही सही ॥



गोशए-तनहाई

तिलोकचन्द 'महरूम', बी.ए.

दुनिया में बहुत दौड़े, राहत के तमन्नाई,
तसकीं की मगर सूरत, तुझमें ही नज़र आई।
ऐ गोशये-तनहाई !

बच्चा नहीं दिल, जिसको ले जाइये मेलों में,
जुज़ तेरे कहाँ राहत, दुनिया के झमेलों में।
ऐ गोशए-तनहाई !

सब ऐब-हुनर अपने, ऐ आइन-ए-बातिन;
तुझ बिन नज़र आ जाएँ, ये बात कहाँ मुमकिन।
ऐ गोशए-तनहाई !

जंगल में, पहाड़ों में, तारीक गुफ़ाओं में,
मरगूब तरीं है या, अश्जार की छाओं में।
ऐ गोशए-तनहाई !

शायर कि मुसव्विर है, फ़ितरत के नज़ारों का;
ज़र्रों में तेरे उसको, जलवा है सितारों का।
ऐ गोशए-तनहाई !

तालिब हैं तेरे अक़्सर, जो इल्म के तालिब हैं;
तुझ से रौशन दिल पर, मज़मूनो मतालिब हैं।
ऐ गोशए-तनहाई !

बुलबुला

तिलोकचन्द 'महरूम' बी.ए.

फूला हुआ है किस लिए? क्या बुलबुले में है?
अल्लाह ! कौन-सी यह हवा बुलबुले में है !
उफ़ ! किस क़दर ग़रूर भरा बुलबुले में है !
फ़रऔन कोई आके छुपा बुलबुले में है।
कितना उभार, कितनी अकड़, कैसी शान है,
पानी की एक बूंद में क्या आन-बान है।
है, आब-ताब ख़ूब ! मगर यह गुहर नहीं;
है ताज यह किसी का, मगर ज़ेबे-सर नहीं ॥



कामयाबी का राज़

डा० सईद अहमद साहब 'सईद' बरेलवी

समुन्दर में फ़ना होते हैं क़तरे अब्रे-नेसाँ के ;
बड़ी दुश्वारियों से तब दुरे-शहवार बनता है ।

हज़ारों हस्तियाँ जब ख़ाक में मिलती हैं बीजों की ;
कहीं तब इक ज़रासा तख़्तए-गुलज़ार बनता है ।

बहुत-सी भट्टियों में तप-तपाकर पाराए-आहन ;
निखरता है, निखरकर तेग़े-जौहरदार बनता है ।

मिलाकर ख़ाक ख़ूँ में सैकड़ों अपने सपूतों को ;
कोई महकूम मुल्क आज़ादो ख़ुद-मुख़्तार बनता है ।

ग़रज़ हर ऐश का रस्ता है मंज़िल से मुसीबत की ;
मुसीबत झेलकर दहक़ान भी क़ाचार बनता है ।

हथेली पर जो रख ले जाँ, उसी की कामयाबी है;
जो रख दे दार पर सर, बस, वही सरदार बनता है ।



'अमजद' के चौपदे

सैय्यद अहमद हुसैन 'अमजद'

कलाम ऐसा अक्सर सुना होगा तुमने;
सुना आज और कल असर दिल में उतरा।
मगर शेर ऐसा जो हो तेज़ ख़ंजर;
इधर मुँह से निकला, उधर दिल में उतरा॥

ज़ाया फ़रमा न सर-फ़रोशी को मेरी;
मिट्टी में मिला न गर्म-जोशी को मेरी।
आता हूँ पहन के ऐ रब्बे-ग़फ़ूर;
धब्बा न लगे सफ़ेद-पोशी को मेरी॥

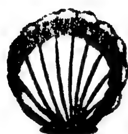
उस मेहरे-जहाँ ताब का ज़र्रा न मिला;
लाखों में किसी एक को रस्ता न मिला।
जेप्लिन पै उड़ा, रेल में दौड़ा लेकिन;
बन्दे को कहीं पता ख़ुदा का न मिला॥

ज़ंजीरे-दरे-अर्श हिलाता हूँ मैं;
आँख उससे नमाज़ में लड़ाता हूँ मैं।
सिजदे के बहाने दिल की बेताबी से;
क़दमों पे किसी के लोट जाता हूँ मैं॥

बे-फ़ायदा कब है, जब्हसाई अच्छी;
ताअत में नहीं है खुदनुमाई अच्छी।
इक सिजदे में ख़ाक कर दिया हस्ती को;
हज़रत, तुमसे दियासलाई अच्छी॥

अच्छा नहीं गुरूर, जल्दी कीजिए ;
हत्तुलइमकान ज़रूर 'जल्दी कीजिये।'
हर साँस ये कह रही है आते-जाते ;
चलने के लिये 'हुज़ूर जल्दी कीजिये॥'

इस जिस्म की केंचुली में एक नाग भी है;
आवाज़े-शिकस्ता दिल में इक राग भी है।
बेकार नहीं बना है इक तिनका भी;
ख़ामोश दियासलाई में आग भी है॥



ख़ाके-वतन

पंडित ब्रजनारायण 'चकबस्त'

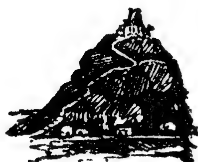
हर सुबह है ये ख़िदमत ख़ुरशीदे-पुर-ज़िया की;
किरनों से गूँथता है चोटी हिमालया की।

सब शूर-वीर अपने इस ख़ाक में निहाँ हैं;
टूटे हुए खंडर हैं या उनकी हड्डियाँ हैं।

कश्मीर से अयाँ है जन्नत का रंग अब तक;
शौकत से बह रहा है दरिआए-गंग अब तक।

गुंचे हमारे दिल के इस बाग़ में खिलेंगे;
इस ख़ाक से उठे हैं, इस ख़ाक में मिलेंगे।

गर्दो-गुबार याँ का ख़िलअत है अपने तन को;
मरकर भी चाहते हैं ख़ाके-वतन कफ़न को॥



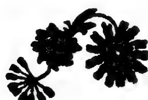
रहे रहे न रहे

पंडित ब्रजनारायण 'चकबस्त'

फ़ना नहीं है मुहब्बत के रंगो-बू के लिये ;
बहारे-आलमे-फ़ानी रहे रहे न रहे ।
जनूने-हुब्बे-वतन का मज़ा शबाब में है,
लहू में फिर ये रवानी रहे रहे न रहे ॥

रहेगी आबो-हवा में ख़्याल की बिजली ;
ये मुश्ते-ख़ाक है फ़ानी रहे रहे न रहे ।
मिटा रहा है ज़माना वतन के मन्दिर को;
ये मर-मिटों की निशानी रहे रहे न रहे ॥

दिलों में आग लगे ये वफ़ा का जौहर है ;
ये जमअ-ख़र्चे-ज़बानी रहे रहे न रहे ।
जो माँगना है अभी माँग लो वतन के लिए ;
ये आरज़ू की जवानी रहे रहे न रहे ॥



भूल गये

पंडित ब्रजनारायण 'चकबस्त'

जहाँ में आँख जो खोली, फ़ना को भूल गए ;
कुछ इब्तदा ही में हम इन्तहा को भूल गए ।
निफ़ाक़ गब्रो-मुसलमाँ का यूँ मिटा आख़िर ;
ये बुत को भूल गये, वो ख़ुदा को भूल गए ।

हुआ मिज़ाज का आलम ये सैरे-युरप से ;
कि अपने मुल्क की आबो-हवा को भूल गये ।
ज़मीं लरजती है, बहते हैं ख़ून के दरिया ;
ख़ुदी के जोश में बन्दे ख़ुदा को भूल गए ॥

यह इन्क़लाब हुआ आलमे-असीरी में ,
कफ़स में रह के हम अपनी सदा को भूल गए ॥



'चकबस्त' के ख़्यालात

पंडित ब्रजनारायण 'चकबस्त'

ज़बाँ को बन्द करें या मुझे असीर करें,
मेरे ख़्याल को बेड़ी पिन्हा नहीं सकते।
ये बेकसी भी अजब बेकसी है दुनिया में,
कोई सताए हमें, हम सता नहीं सकते ॥

मुहब्बत है मुझे कोयल के दर्द-अंगेज़ नालों से,
चमन में जाके मैं फूलों का शैदा हो नहीं सकता ॥

दिल पे अहबाब के है दाग़े-मुहब्बत बाक़ी,
रह गयी एक यही दुनियाँ में मेरी निशानी ॥

अरमान यही है, यही आलम है नज़र में,
जो बुझ न सके आग वो पैदा हो जिगर में।
है शौक की मंज़िल यही दुनियाँ की सफ़र में,
क्या ख़ाक जवानी जो सौदा नहीं सर में।
पाबन्द क़फ़स की नहीं ये आहे-शरर-बार,
लग जाय कहीं आग न सैय्याद के घर में ॥

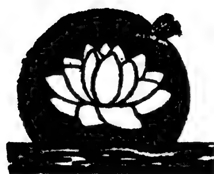
रहती हैं उमंगें कहीं ज़ंजीर की पाबन्द ?
हम क़ैद हैं ज़िन्दाँ में, बियाबाँ है नज़र में ॥

दिल ही की बदौलत रंज भी है, दिल ही की बदौलत राहत भी;
ये दुनिया जिसको कहते हैं, है दोज़ख़ भी औ जन्नत भी।

नये झगड़े, निराली काविशें ईजाद करते हैं,
वतन की आबरू अह्ले-वतन बरबाद करते हैं ॥

मुल्क में दौलत नहीं बाक़ी दवा के वास्ते,
हाथ ख़ाली रह गये हैं अब दुआ के वास्ते ॥

आशना हों कान क्या इन्सान की फ़रियाद से ;
शेख़ को फ़ुरसत नहीं मिलती ख़ुदा की याद से ॥



देखते

अली सिकंदर साहब 'जिगर', मुरादाबादी

इश्क़ की हद से निकलते, फिर ये मंज़र देखते ;
काश ! हुस्ने-यार को हम हुस्न बनकर देखते ।
गुंचाओ-गुल देखते या माहो-अख़्तर देखते ;
तुम नज़र आते हमें, हम कोई मंज़र देखते ॥

दूर जाकर देखते, नज़दीक आकर देखते ;
हमसे हो सकता तो हम उनको बराबर देखते ।
फ़ितरते-मज़बूर पर क़ाबू ही कुछ चलता नहीं,
वरना हम तो तुझसे भी तुझको छुपाकर देखते ॥

मिल गयीं नज़रों से नज़रें और मिलकर रह गयीं,
चश्मे-साक़ी देखकर क्या जामो-साग़र देखते ?
हाय, वो चेहरा और उसमें वो तड़पती बिजलियाँ,
काश, एक दिन फिर उसे गुस्ताख़ बनकर देखते ॥

दम-ब-खुद हैं हज़रते-ज़ाहिद यहीं तक देखकर ;
होश उड़ जाते अगर शीशे से बाहर देखते ॥

क़सम

शब्बीर हसन ख़ाँ 'जोश', मलीहाबादी

क़सम उनकी जो हँसकर ख़ून में अपने नहाते हैं,
ख़ुशी से रण में डट कर मुँह पे तल्वारें जो खाते हैं।

क़सम उस बर्फ़ की जो गिरके ख़िरमन फूँक देती है,
क़सम उस मौत की जो ख़ंजरों में साँस लेती है।

क़सम है उस कमाँ की जो सरे-मैदाँ कड़कती है,
क़सम उस आग की जो क़ल्बे-शायर में भड़कती है।

क़सम उस जज़्बाए-ग़ैरत की जो आज़ाद करता है,
क़सम उस तनतने की जिस पै हर ख़ुद्दार मरता है।

क़सम उस साँस की जो मौत के हंगाम चल्ती है,
क़सम उस वक़्त की जब ज़िन्दगी करवट बदल्ती है।

क़सम ऐ मौत! उनकी, रंग तेरा जो उड़ाते हैं,
तेरी आँखों में आँखें डालकर जो मुस्कराते हैं।

क़सम उस जोश की जो डूबती नब्ज़ें उभारेगा,
कि ऐ हिन्दोस्ताँ! जैसे ही तू मुझको पुकारेगा।

मेरी तेग़े-रवाँ बातिल के सर पर जगमगायेगी,
तेरे होठों की जुम्बिश ख़त्म भी होने न पायेगी।



ख़रीदार न बन

शब्बीर हसन ख़ाँ 'जोश', मलीहाबादी

चुटकियाँ बाग़ में सरगर्म हैं गुलचीनों की,

चमनिस्ताने-जहाँ में गुले-बेख़ार न बन।

पस्त से पस्त हो जो चीज़ वो बनजा, लेकिन,

मरके भी जिन्से-गुलामी का ख़रीदार न बन ॥



ग़रीबों की ईद

शब्बीर हसन ख़ाँ 'जोश' मलीहाबादी

अहले-दवल में धूम थी रोज़े-सईद की,
मुफ़लिस के दिल में थी न किरन भी उम्मीद की।

इतने में और चर्ख़ ने मिट्टी पलीद की,
बच्चे ने मुस्करा के ख़बर दी जो ईद की।

फ़र्ते-मुहन से नब्ज़ की रफ़्तार रुक गयी,
माँ-बाप की निगाह उठी और झुक गयी।

आँखें झुकीं कि दस्ते-तही पर नज़र गयी,
बच्चे के वल्वलों की दिलों तक ख़बर गयी।

ज़ुल्फ़े-सबात ग़म की हवा से बिखर गयी,
बरछी-सी एक दिल से जिगर तक उतर गयी।

दोनों हुजूमे-ग़म से हम-आगोश हो गये,
एक दूसरे को देखके ख़ामोश हो गये॥



नया पुजारी

समदयार खाँ 'साग़र निज़ामी'

कोइ है बहारे-चमन का पुजारी। कोइ है गुलो-यासमन का पुजारी।
बुते-मौलवी को कोई पूजता है। कोई क़शक़ाए-ब्राह्मन का पुजारी।
गुलामे-गुलामाने-ज़मज़म है कोई। कोई मौजे-गंगो-जमन का पुजारी।

मगर मेरा ज़ौक़े-परस्तिश जुदा है,
मैं 'साग़र' हूँ अपने वतन का पुजारी॥

कोई है परस्तारे-गेसूए-हिन्दू। कोई है बुते-सीम-तन का पुजारी।
कोई सुर्ख़ टीके पे सर धुन रहा है। कोई शोलए- अंजुमन का पुजारी।
कोई है मुरीदे-कनीज़ाने-काबा। कोई दुख़्तरे-बरहमन का पुजारी।

मगर मेरा ज़ौक़े-परस्तिश जुदा है।
मैं 'साग़र' हूँ अपने वतन का पुजारी।

वतन वो,वतन वो,महकता शिवाला। वो राहतका मन्दर,मुहब्बत का काबा।
ख़तीबे-हिमाल्य का ज़रकार मिम्बर। वो जमुना की गोदी,वो गंगा का झूला।
वो मन्दर है मेरा वतन जिसके अन्दर। हज़ारों ख़ुदा हैं तो लाखों [कलीसा।

मगर मेरा ज़ौक़े-परस्तिश जुदा है।
है 'साग़र' हूँ अपने वतन कापुजारी॥

हर एक क़ैदे-फ़र्ज़ी से आज़ाद हूँ मैं। तरक्की-दहे-बज़्मे-ईजाद हूँ मैं।
अक़ीदे मेरे सामने काँपते हैं। असूले-मुहब्बत की बुनियाद हूँ मैं।
न ज़ुन्नार का ग़म, न तसबीह का ग़म। दिमाग़ी ग़ुलामी से आज़ाद हूँ मैं।

मगर मेरा ज़ौक़े-परस्तिश जुदा है,
मैं 'साग़र' हूँ अपने वतन का पुजारी॥



राजदुलारे सो जा!

पं० सोहनलाल 'साहिर' बी. ए.

सो जा मेरे प्यारे सो जा,
मेरे राजदुलारे सो जा!

नींद की परियाँ आओ आओ; मीठी मीठी लोरियाँ गाओ।
मेरी जान है, नन्हाँ प्यारा; मेरा मान है नन्हाँ प्यारा।
ज्यों-ज्यों तू परवान चढ़ेगा; जग में तेरा नाम बढ़ेगा।

सो जा मेरे प्यारे सो जा,
मेरे राजदुलारे सो जा!

हिम्मत, अज़मत चाकर तेरी; हशमत, शौकत चाकर तेरी।
तख़्त भी तेरा, ताज भी तेरा; बख़्त भी तेरा, बाज़ भी तेरा;
कैसे-कैसे काम करेगा, पैदा जग में नाम करेगा।

सो जा मेरे प्यारे सो जा,
मेरे राजदुलारे सो जा!

धूम से तेरा ब्याह रचाऊँ; गोरी चिट्टी बेगम लाऊँ।
धन औ दौलत तुझ पर वारूँ; राज को तेरे, सदक़े वारूँ।
गोद खिलाऊँ तेरे बच्चे, सो जा, सो जा मेरे बच्चे।

सो जा मेरे प्यारे सो जा,
मेरे राजदुलारे सो जा!



तीसरी बहार

'अकबर' के जज़्बात

ख़ान बहादुर अकबर हुसैन 'अकबर', इलाहाबादी

जहाँ ने साज़ बदला, साज़ ने नग़मों की गत बदली;
गतों ने रंग बदला, रंग ने यारों की मत बदली।
फ़लक ने दौर बदला, दौर ने इन्सान को बदला;
गए हम तुम बदल, क़ानून बदला, सल्तनत बदली॥

रंग चेहरे का तो कालिज ने भी रक्खा क़ायम;
रंगे-बातिन में मगर बाप से बेटा न मिला॥

तहज़ीब के ख़िलाफ़ है, लाए जो राह पर;
अब शायरी वो है जो उभारे गुनाह पर॥

रक़ीबों ने रपट लिखवाई है जा-जा के थाने में;
कि 'अकबर' ज़िक्र करता है ख़ुदा का इस ज़माने में॥

मुरीद इनके तो शहरों में उड़े फिरते हैं मोटर पर;
नज़र आते हैं अब तक शेख़ जी अब तक मियाने में॥

हम क्या कहें अहबाब क्या कारे-नुमायाँ कर गए;
बी. ए. हुए, नौकर हुए, पेंशन मिली, फिर मर गये॥

कल मस्ते-ऐशो-नाज़ थे होटल के हॉल में ;
अब 'हाय' 'हाय' कर रहे हैं अस्पताल में ॥

ग़रूर उन्हें है, तो मुझको भी नाज़ है 'अकबर' ।
सिवा ख़ुदा के सब उनका है और ख़ुदा मेरा ।
फ़लसफ़ा को बहस के अन्दर ख़ुदा मिलता नहीं ;
डोर को सुलझा रहा है औ सिरा मिलता नहीं ॥

तालीम उसकी अच्छी जो अपने घर में ख़ुश हो ;
मज़हब उसी का अच्छा जिसको पुलिस न पकड़े ॥

मुवक्किल छुटे इनके पंजे से सब ; तो बस क़ौमे-महरूम के सर हुए ।
पपीहा पुकारा किए 'पी कहाँ ?' ; मगर वो पिलीडर से लीडर हुए ॥

कामयाबी का सुदेशी पर हर एक दर बस्ता है ;
चोंच तोताराम ने खोली, मगर पर बस्ता है ।

मेरे मनसूबे-तरक़्क़ी के हुए सब पायमाल ;
बीज मग़रिब ने जो बोया वो उगा औ फल गया ।
बूट डॉसन ने बनाया, मैंने एक मज़मूँ लिखा ;
मुल्क में मज़मूँ न फ़ैला और जूता चल गया ॥

साथ उनके मेरा शेख़ तो चल ही नहीं सकता ;
बन्दर की तरह ऊँट उछल ही नहीं सकता ॥

कौंसिलों में सवाल करने लगे।
क़ौमी ताक़त ने जब जवाब दिया ॥

तंग दुनियाँ से दिल इस दौरे-फ़लक में आ गया ;
जिस जगह मैंने बनाया घर, सड़क में आ गया ॥

चुगलियाँ एक दूसरे की वक़्त पर जड़ते भी हैं ;
नागहाँ गुस्सा जो आ जाता है लड़ पड़ते भी हैं।
हिन्दू वो मुस्लिम हैं फिर भी एक औ कहते हैं सच ;
हैं नज़र आपस की हम, मिलते भी हैं, लड़ते भी हैं ॥

जो ख़िरद-मन्द हैं वो ख़ूब समझते हैं ये बात ;
ख़ैरख़्वाही वो नहीं है जो हो डर से पैदा ॥

आबरू चाहो अगर अंग्रेज़ से डरते रहो ;
नाक रखते हो तो तेग़े-तेज़ से डरते रहो ॥

रिआया को मुनासिब है कि बाहम दोस्ती रखें ;
हिमाक़त हाकिमों से है तवक़्का गर्म-जोशी की ॥

दफ़्तरे-तदबीर तो खोला गया है हिन्द में ;
फ़ैसला क़िस्मत का ऐ 'अकबर' मगर लन्दन में है ।

पाँव कापा ही किए ख़ौफ़ से उनके दर पर
चुस्त पतलून पहनने से भी पिंडली न तनी

बे-इल्म भी हम लोग हैं, गफ़लत भी तारी है ;
अफ़सोस कि अन्धे भी हैं, और सो भी रहे हैं ॥

थे केक की फ़िक्र में, सो रोटी भी गयी ;
चाही थी शै बड़ी, सो छोटी भी गयी ।
वाइज़ की नसीहतें न मानीं 'अकबर' ;
पतलून की ताक में लंगोटी भी गयी ॥

तहमद में बटन जब लगाने लगे तब धोती से पतलून उगा,
हर पेड़ पर एक पहरा बैठा, हर खेत में एक क़ानून उगा ॥

छापे की तक़वियत पर लीडर बनो न 'अकबर';
अपनी बिसात देखो, अपना मुकाम देखो ॥

नयी नयी लग रही हैं आँचें यह क़ौम बेकस पिघल रही है ।
न मशरक़ी है, न मगरिबी है ; अजीब साँचे में ढल रही है ॥

चर्ख़ ने पेशे-कमीशन कह दिया इज़हार में ;
क़ौम कालिज में और इसकी ज़िन्दगी अख़बार में ॥

ईमान बेचने पे हैं अब सब तुले हुए ;
लेकिन ख़रीद हो जो अलीगढ़ के भाव से ॥

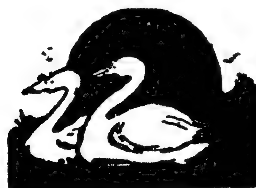
पहनने को तो कपड़े ही न थे क्या बज़्म में जाते ;
ख़ुशी घर बैठे कर ली हमने जश्ने-ताजपोशी की ॥

पड़ा है क़हत बशर मर रहे हैं फ़ाक़ों से ;
ख़ुशी हो क्या मुझे शब-रात में पड़ाकों से ।
बुझी हुई है तबीयत यह रोशनी है फ़जूल ;
उतार लीजिये साहब चिराग़ ताक़ों से ॥

तमाशा देखिए बिजली का मग़रिब और मशरिक में ;
कलों में है वहाँ दाख़िल, यहाँ मज़हब पे गिरती है ॥

पाती हैं क़ौमें तिजारत से उरूज ; बस यही उनके लिए मअराज है ।
है तिजारत वाक़ई एक सल्तनत ; नाज़ यूरप को इसी का आज है ।
लफ़्ज़े-ताजिर ख़ुद है ऐ 'अकबर' सबूत ; देख लो ताजिर के सरपर
[ताज है ॥

कर ली है ख़ूब मैंने नयी रोशनी की जाँच ;
मुझ से बहुत न कीजिए अब आप तीन-पाँच ।
इन लीडरों की शुअला-ज़बानी से क्या हुआ ;
हाँडी तो सर्द रह गयी, मज़हब पै आयी आँच ॥



एक वाक़या

अल्लामा शिब्ली नुमानी

एक दिन हज़रते-फ़ारूक़ ने मिम्बर पै कहा ;—
"मैं तुम्हें हुक्म जो कुछ दूँ, वो करोगे मंज़ूर।"
एक ने उठके कहा यह कि—"न मानेंगे कभी ;
कि तेरे अदल में हमको नज़र आता है फ़ितूर।

चादरें माले-ग़नीमत में जो अब की आयीं ;
सहने-मस्जिद में वो तक़सीम हुईं सब के हुज़ूर।
उनमें हर एक के हिस्से में फ़क़त एक आयी ;
था तुम्हारा भी वही हक़ कि यही है दस्तूर॥

अब जो यह जिस्म पै तेरे नज़र आता है लिबास ;
यह उसी लूट की चादर से बना होगा ज़रूर।
मुख़्तसर थी वो रिदा औ तेरा क़द है दराज़ ;
एक चादर में तेरा जिस्म न होगा मस्तूर॥

अपने हिस्से से ज़ियादा जो लिया तूने तो अब ;
तू ख़िलाफ़त के न क़ाबिल है न हम हैं मामूर।"

रोक दे कोई किसी को ये न रखता था मजाल ;
नशए-अदलो-मसावात में सब थे मख़्मूर ॥

अपने फ़र्ज़न्द से फ़ारूक़े-मुअज़्ज़म ने कहा ;
" तुम को है हालते-असली की हक़ीक़त में उबूर ।
तुम्हीं दे सकते हो इसका मेरी जानिब से जवाब ;
कि न पकड़े मुझे महशर में मेरा रब्बे-ग़फ़ूर ॥

बोले यह इब्ने-उमर सबसे मुख़ातिब होकर ;—
" इसमें कुछ वालिदे-माजिद का नहीं जुर्मो-कुसूर ।
एक चादर में जो पूरा न हुआ इनका लिबास ;
कर सकी इसको गवारा न मेरी तबए-ग़यूर ।

अपने हिस्से की भी मैंने इन्हें चादर दे दी ;
वाक़ए की ये हक़ीक़त है जो थी मस्तूर ।"
नुक्ताचीं ने ये कहा उठके कि—"हाँ, ऐ फ़ारूक़ !
हुक्म दे हमको कि अब हम उसे मानेंगे ज़रूर ॥"



इंसाफ़

अल्लामा शिब्ली नुमानी

इफ़्लास से था सय्यदए-पाक का ये हाल ;
घर में कोई कनीज़ न कोई गुलाम था ।
घिस घिस गयीं हाथ की दोनों हथेलियाँ,
चक्की के पीसने का जो दिन रात काम था ।
सीने पै मश्क भरके जो लाती थीं बार-बार ;
गो नूर से भरा था मगर नीलफ़ाम था ।
भर जाता था लिबासे-मुबारक गुबार से ;
झाड़ू का मशग़ला भी जो हर सुबहो-शाम का ।

आख़िर गयीं जनाबे-रसूले-ख़ुदा के पास ,
ये भी कुछ इत्तिफ़ाक कि वाँ इज़्ने-आम था ।
महरम न थे जो लोग तो कुछ कर सकीं न अर्ज़ ;
वापस गयीं कि पासे-हया का मुक़ाम था ।

जब फिर गयीं दुबारा तो पूछा हुज़ूर ने ;
'कल किस लिए तुम आयी थीं,क्या ख़ास काम था ?'

ग़ैरत ये थी कि मुँह से न कुछ फिर भी कह सकीं ;
हैदर ने अपने मुँह से कहा जो पयाम था।

इर्शाद यह हुआ कि ग़रीबाने बे-वतन ;
जिनका कि सीग़ए-नवुवी में क़याम था।
मैं उनके बन्दोबस्त से फ़ारिग़ नहीं हनोज़ ;
हरचन्द इसमें ख़ास मुझे इहतिमाम था।

जो जो मुसीबतें कि अब उनपर गुज़रती हैं ;
मैं उनका ज़िम्मेदार हूँ, ये मेरा काम था।
कुछ तुमसे भी ज़ियादा मुक़द्दम है उनका हक़ ;
जिनको कि भूख-प्यास से सोना हराम था।

ख़ामोश होके सय्यदए-पाक रह गयीं।
जुरअत न कर सकीं कि अदब का मुक़ाम था।
यों की हर अह्ले-बैते-मुत्ताहने ज़िन्दगी ;
यह माजराए दुख़्तरे-ख़ैरुल अनाम था॥



पहले नज़र पैदा कर

महाराजा सर किशन प्रसाद 'शाद'

ज़र्रे ज़र्रे में है जल्वा उसका;
वो अयाँ है तो निहाँ क्या होगा ?
इश्क़ मंज़ूर है गर, सोज़े-जिगर पैदा कर ;
देखना है जो उसे, पहले नज़र पैदा कर ।
अहले-हुनर की क़द्र ज़माने से उठ गयी ,
अब इम्तियाज़े-नाक़िसो-कामिल नहीं रहा ।

आप अपनेको फ़ना ज़ात में उसकी करना ,
बस यही एक तरीक़ा है उसको पाने का ॥

सरफ़राज़ी उसी को हासिल है ;
जो ज़माने में ख़ाकसार रहा ।

सबेरा

बेनज़ीर शाह

नज़ूमे-फ़लक झिलमिलाने लगे,
चिराग़े-सहर टिमटिमाने लगे।
वो ठंडी हवा और तारों की छाँ,
नज़ूले-ज़िया का वो प्यारा समाँ।
वो बाग़ों में कलियाँ चिटख़ने लगीं,
वो शाख़ों पे चिड़ियाँ चहकने लगीं।

वो शबनम ने छिड़का चमन पर गुलाब,
न रह जाएगा कोई सरगर्मे ख़्वाब।
नसीमे-सहर गुल खिलाने लगी,
फ़िज़ाए-सहर रंग लाने लगी।
ज़िया आसमाँ से उतरने लगी,
नज़र दूर तक काम करने लगी।

अनादिल गुलिस्ताँ में गाने लगे,
तयूरे-सेहर दिल लुभाने लगे।
'अल्लाहो अकबर' की आई सदा,
नहा-धोके मस्जिद चले पारसा।

नया चमन

वो मैना पहाड़ी वो काला लवा,
हुये आके शाख़ों पै नग़्मा-सरा ।

शुआएँ दिखाने लगीं वह झलक ;
हुई ज़ाफ़रानी बिसाते-फ़लक़ ।
शफ़क़ में बसन्ती किरन ज़ौ-फ़िशां ;
गले मिल रही हैं बहारो-ख़िज़ाँ ।
वो ज़र्दी ज़रा और गहरी हुई,
पहाड़ों की चोटी सुनहरी हुई ।



कुछ गहरे शेर

पंडित अमरनाथ मदन 'साहिर'

जो फ़ना में मेरा मुक़ाम है, जो बक़ा में मेरा क़याम है।
वो चढ़ाव है मेरे नश्शा का, ये उतार मेरे ख़ुमार का॥

तेरी हस्ती से तो ऐ जाँ! कभी इनकार न था;
अपनी हस्ती का किसी दम मुझे इक़रार न था।
थी सरापाए-दुआलम में तेरी जल्वा-गरी;
तेरा जल्वा था, मेरा आलमे-पिन्दार न था।
सानए-कोनो-मकाँ हम तेरी सनअत के निसार;
ऐसी तामीर में एक ज़र्रा भी बेकार न था॥

पिनहाँ शजर में तुख़्म हुआ, तुख़्म में शजर;
रोशन है ये मिसाल कि दाना शजर हुआ॥

कीमियागर ने तपा कर आग में 'साहिर' का दिल;
जब कसौटी पर कसा नाक़िस को कामिल कर दिया॥

क़तरा दरिया है अगर अपनी हक़ीक़त जाने,
खोए जाते हैं जो हम आपको पा लेते हैं॥

उसकी रज़ा में जब सरे-तसलीम ख़म हुआ ;
हम खुश-गवार पाते हैं हर ना-गवार को ॥

जब नक़्शे-दुई दिल से मिट जाय तो ज़ाहिर हो ;
तहक़ीर से क्या नुक्साँ, तौक़ीर से क्या हासिल ॥

देखा है शजर तुख़्म को औ तुख़्म शजर को ;
हम ताड़ते हैं अह्ले-हक़ीक़त की नज़र को ।
जुज़ कुल नज़र आता है जो हो दीदाए-बीना ;
ज़र्रा में है खुर्शीद अयाँ अहले-बसर को ॥

आमद है तेरी या है मेरे होश की रुख़सत ;
मंज़िल है तेरी या मेरा आपे से सफ़र है ॥

रहगुज़र उम्रे-रवाँ का है अजब ना-हमवार ;
कभी देखी है बुलन्दी, कभी पस्ती देखी ।
दिल सी अर्ज़ाँ नहीं आलम में कोई शै 'साहिर' ;
बेदिली हमने मगर इससे भी सस्ती देखी ॥

सरबस्ता राज़ तेरा हो राज़दाँ तो जाने,
तू खुद समा रहा है पैकर में आदमी के ।
'साहिर' में और हम में कुछ फ़र्क़ है तो इतना ;
वो जी उठा है मरके, हम मर मिटे हैं जी के ॥

आँख के तिल में रहे नूरे-नज़र की सूरत ;
पास के पास रहे, दूर के वो दूर रहे ॥

मस्त जो यादे-सनम में है, वही है होशियार ;
होश अपना है जिसे, याद से ग़ाफ़िल है वही ।
देखता जल्वा को अपने है वो खुद, ऐ 'साहिर' ;
जाँ वही, जिस्म वही, दीदा वही, दिल है वही ॥

खुदनुमा महवे-खुदआराई हुआ मेरे लिए ;
वो तमाशाई तमाशा बन गया मेरे लिए ॥



ख़्वाहिश

डाक्टर सर शेख़ मुहम्मद इक़बाल

दुनियाँ की महफ़िलों से उकता गया हूँ या रब !
क्या लुत्फ़ अंजुमन का जब दिल ही बुझ गया हो ।
शोरिश से भागता हूँ, दिल ढूँढ़ता है मेरा,
ऐसा सकूत जिस पर तक़रीर भी फ़िदा हो ॥

मरता हूँ ख़ामुशी पर यह आरज़ू है मेरी ,
दामन में कोह के एक छोटा-सा झोंपड़ा हो ।
आज़ाद फ़िक्र से हूँ, उज़लत में दिन गुज़ारूँ ;
दुनिया के ग़म का दिल से काँटा निकल गया हो ॥

लज़्ज़त सरोद की हो चिड़ियों के चहचहों में ;
चश्मे की शोरिशों में बाजा-सा बज रहा हो ।
गुल की कली चटककर पैग़ाम दे किसीका ;
साग़र ज़रा-सा गोया मुझको जहाँ-नुमा हो ॥

हो हाथ का सिरहाना, सब्ज़े का हो बिछौना ;
शर्माय जिससे जलवत, ख़िलवत में वो अदा हो ।
मानूस इस क़दर हो सूरत से मेरी बुलबुल ;
नन्हें से दिल में उसके खटका न कुछ भरा हो ॥

सफ़अ बाँधे दोनों जानिब बूटे हरे हरे हों ;
नद्दी का साफ़ पानी तस्वीर ले रहा हो ।
हो दिल-फ़रेब ऐसा कुहसार का नज़ारा ;
पानी भी मौज बनकर उठ उठ के देखता हो ॥

आग़ोश में ज़मीं के सोया हुआ हो सब्ज़ा ;
फिर फिर के झाड़ियों में पानी चमक रहा हो ।
पानी को छू रही हो झुक झुक के गुल की टहनी ,
जैसे हसीन कोई आईना देखता हो ॥

मेंहदी लगाए सूरज जब शाम की दुल्हन को ;
सुरख़ी लिए सुनहरी हर फूल की कबा हो ।
रातों को चलनेवाले रह जायँ थक के जिस दम ;
उम्मीद उनकी मेरा टूटा हुआ दिया हो ॥

बिजली चमक के उनको कुटिया मेरी दिखा दे,
जब आसमाँ पे हरसूँ बादल घिरा हुआ तो ।
पिछले पहर की कोयल वो सुबह की मुअज़्ज़िन ,
मैं उसका हमनवा हूँ, वह मेरी हमनवा हो ॥

कानों पै हो न मेरे दैरो-हरम का इहसाँ ;
रौज़न ही झोंपड़ी का मुझको सहरनुमा हो ।

फूलों को आये जिस दम शबनम वज़ू कराने,
रोना मेरा वज़ू हो, नाला मेरी दुआ हो ॥

इस ख़ामुशी में जाएँ इतने बुलन्द नाले,
तारों के क़ाफ़िले को मेरी सदा दरा हो।
हर दर्द-मन्द दिल को रोना मेरा रुला दे;
बेहोश जो पड़े हैं, शायद उन्हें जगा दे ॥



विधवा

मुंशी दुर्गासहायजी 'सरूर' जहानाबादी

वो दुखिया हूँ, नहीं दर्दे-निहाँ का राज़दाँ कोई ;
वो बेकस हूँ, नही सुनता है मेरी दासताँ कोई ।
बनाया है सरापा दाग़े-हसरत सोज़े-हिरमाँ ने ;
पिन्हाए आह ! फूलों की न मुझको बद्धियाँ कोई ।
तक़ाज़ा लज़्ज़ते-ज़ौक़े-ख़लिश का है शबे-ग़म में ;
जिगर में आह रख दे चीर कर नोके-सिनां कोई ।
ज़माना हो रहा है आह जब तारीक नज़रों में ;
सँवारे बाम पर क्या गेसुए-अम्बर-फ़शाँ कोई ।

संभाल ए ज़ब्त उठकर इज़्तराबे-दिल से डरती हूँ ;
कि नाज़ुक है ज़माना हो न मुझसे बद-गुमाँ कोई ॥
जलाया चुपके चुपके आतिशे-ख़ामोशी-ग़म तू ने ॥
बुझाई आग कब दिल की लगी अब्रे-करम तूने ॥



हसरत भरे शेर

मौलाना हसरत मोहानी

सियाकार थे, बा-सफ़ा हो गये हम;
तेरे इश्क़ में क्या से क्या हो गए हम।
न जाना कि शौक़ और भड़केगा मेरा;
वो समझे कि उससे जुदा हो गये हम।
दमे-वापसीं आए पुरसिश को नाहक़,
बस, अब जाओ तुमसे ख़फ़ा हो गए हम।
जब उनसे अदब ने न कुछ मुँह से मांगा;
तो इक पैकरे-इलतिजा हो गये हम॥

ख़िरद का नाम जनूँ पड़ गया, जनूँ का ख़िरद;
जो चाहे आपका हुस्ने-करिश्मा-साज़ करे।

न मुझको उसकी ख़बर है, न ख़ुद उन्हें है ख़्याल;
कुछ इस तरह से मुहब्बत बढ़ाई जाती है।

गोया वो सब सुना ही तो देगी वहाँ का हाल,
क्या क्या सवाल करते हैं बादे-सबा से हम॥

होके नादिम बैठे हैं ख़ामोश;
सुल्ह में शान है लड़ाई की।

शबे-फ़ुर्क़त में याद उस बे-वफ़ा की बार-बार आयी,
भुलाना हमने भी चाहा मगर बे-इख़्तियार आयी।
इलाही, रंग ये कब तक रहेगा हिज्रे-जानां में,
कि रोज़े-बेदिली गुज़रा तो शामे-इन्तज़ार आयी॥

ख़ाकसारों में अपने देके जगह;
तुमने मग़रूर कर दिया हम को।

बेकली से मुझे राहत होगी;
छेड़ दें आप, इनायत होगी।

वो दर्दमन्द हूँ 'हसरत' कि बजाए-सितम;
करे जो लुत्फ़ भी कोई तो अश्कबार हूँ मैं।

है इन्तहाए-यास भी इब्तदाए-शौक़;
फिर आ गए वहीं पे चले थे जहाँ से हम।

अहले-नज़र को भी नज़र आया न रूए-यार;
याँ तक हिजाबे-नूर ने मस्तूर कर दिया॥

हुस्न से अपने वो ग़ाफ़िल था, मैं अपने इश्क़ से;
अब कहाँ से लाऊँ वो नावाक़फ़ीयत के मज़े।

मुझ से भी ख़फ़ा हो मेरी आहों से भी बरहम;
तुम भी हो अजब चीज़ कि लड़ते हो हवा से॥

चन्द मीठे शेर

शौकत अली खाँ 'फ़ानी'

सुन के .तेरा नाम आँखें खोल देता था कोई;
आज तेरा नाम लेकर कोई ग़ाफ़िल हो गया।

शौक़ से नाकामी की बदौलत कूचाए-दिल ही छूट गया;
सारी उम्मीदें टूट गयीं, दिल बैठ गया, जी छूट गया।
मंज़िले-इश्क़ पै तनहा पहुँचे, कोई तमन्ना साथ न थी;
थक-थक कर इस राह में आख़िर इक इक साथी छूट गया॥

इश्क़ ने दिल में जगह की तो कज़ा भी आयी;
दर्द दुनिया में जब आया तो दवा भी आयी।
दिल की हस्ती से किया इश्क़ ने आग़ाह मुझे;
दिल जो आया तो धड़कने की सदा भी आयी।
इसी को तुम अगर ऐ अहले-दुनिया! जान कहते तो;
वो कांटा जो मेरी रग रग में रह रहकर खटकता है॥

मुश्ताक़ ख़बरदार रहें दिल से, जिगर से;
मिलती है ज़माने की नज़र उनकी नज़र से।

मुझे क़सम है तेरे सब्र आज़माने की ;
कि दिल को अब नहीं बर्दाश्त ग़म उठाने की।
तेरा असीर हूँ चाहे तो ज़िबह कर सैय्याद ;
न तोड़, दिल की अमानत है आशियाने की।
न साँस का है भरोसा, न आह में तासीर ;
वो क्या फिरे कि हवा फिर गयी ज़माने की।।

दिल का उजड़ना सहल सही, बसना सहल नहीं ज़ालिम ;
बस्ती बसना खेल नहीं, बस्ते-बस्ते बस्ती है।



सोसाइटी

सैय्यद आशिक़ हुसैन 'सीमाब' अकबराबादी

वो नापाक मजमा वक़्त ज़ाया करनेवालों का ;
वो हैबतनाक मरकज़ ज़हर-आलूदा ख़यालों का ।
मुहज़्ज़ब एक महफ़िल डाकुओं की औ लुटेरों की ;
मुनज़्ज़म एक टोली शोबदासामों सपेरों की ॥



वो नाजायज़ जथा ख़ुदराय, ख़ुद-बीं, ख़ुद-परस्तों का,
वो नाशाइस्ता हलक़ा, बेहयाओं, फ़ाक़ा मस्तों का ।
ख़तरनाक एक जमाअत, ख़ुद-गरज़, बे-एतमादों का ;
शरंगेज़ एक मजलिस, वक़्त के शैतान ज़ादों का ॥



वो एक बातिल-कदा, हक़ की जहाँ पुरसिश नहीं होती ;
ज़मीरो-रूह की ता-दूर गुंजाइश नहीं होती ।
वो साज़िश-गाह होती है जहाँ तख़रीब इन्सां की ;
वो आतिश-गाह, फुकती है जहाँ तहज़ीब इंसाँ की ॥



जहाँ बद-रस्मियों की डाल दो जाती हैं ज़ंजीरें ;
जहाँ बरबादि-ए-अख़लाक़ की होती हैं तदबीरें।
रियाकारी जहाँ ढलती है मक्कारी के सांचों में ;
जहाँ इक़बाल जलता है हसद की तेज़ आँचों में ॥



वो एक मज़बह जहाँ कटती है गर्दन बेगुनाहों की ;
वो एक मक़तल जहाँ चलती हैं छुरियाँ कज-निगाहों की।
वो शोरिश-गह, जहाँ फ़ितने नये बेदार होते हैं ;
जहाँ क़ानून बुग्ज़ो-किब्र के तैयार होते हैं ॥



कहाँ जाता है तू लुटने को इस तूफ़ान-ग़ारत में।
जिसे समझा है जन्नत वो जहन्नुम है हक़ीक़त में ॥



सितारों के गीत

सैय्यद आशिक़ हुसैन 'सीमाब' अकबराबादी

हम जल्वे हैं औ ख़ुद अपने जल्वे शब भर चमकाते हैं ;
हम नग़मे हैं औ ख़ुद अपने मासूम तराने गाते हैं।
कुछ भीनी भीनी आवाज़ें इलहाम-कदे से आती हैं ;
गिरते ही हमारे होठों पर शीरीं नग़मे बन जाती हैं।

हम अपने शीरीं-नग़मों से बरसाते हैं बेदारी-सी ;
बहने लगती है दुनियाँ के ऐवानों पर सरशारी-सी।
ऐ दुनिया के रहनेवालो ! तुम क्यों मग़मूमे-पस्ती हो ;
हम भी उसकी आबादी हैं, तुम जिस दुनियाँ की बस्ती हो।

तुममें हममें कुछ फ़र्क नहीं मख़लूक़ ख़ुदा की दोनों हैं ;
वाबस्ता एक ही रिश्ते से ये नूरी ख़ाकी दोनों हैं।
हाँ, फ़र्क अगर है तो इतना, तुम ग़ाफ़िल हो, बेदार हैं हम ;
उस नश्शे से महरूम हो तुम, जिस नश्शे से सरशार हैं हम।

जो नूर हक़ीक़त हम में है वो तुम में भी ताबिन्दा है ;
. लेकिन है तुम्हारा दिल मुर्दा औ रूह हमारी ज़िन्दा है।

तुम रात को ऐ दुनियावालो ! फ़िक्रे-राहत में मरते हो ;
यूँ ज़ाया आधी उम्र अपनी एक ख़्वाब-गराँ में करते हो।

हम अपने रोशन गीतों से जब रात जगाने आते हैं ;
आग़ोश-अजल में ख़्वाबीदा सारी दुनियाँ को पाते हैं।
तुम सुन नहीं सकते वो नग़मे जिनसे गफ़लत शरमाती है,
जब उनकी आग बरसती है, सारी हस्ती थर्राती है।

हम रूह की मस्ती से भरकर पैमाने अपने लाते हैं ;
पैग़ाम सकूने-हस्ती का इन्सान को देने आते हैं।
ऐ ग़ाफ़िल इन्साँ जाग कभी, बे-माँगे दौलत लुटती है,
तू वक़्त गवाँता है सो कर औ शब भर नेमत लुटती है।

ऐ ग़ाफ़िल इन्साँ, जाग कभी पिछले को क्या कुछ होता है,
फ़ितरत मिलने को आती है औ तू बे-परवा हो सोता है।
ऐ ग़ाफ़िल इन्साँ, सोच कभी, ये राज़ नहीं, आईना है ;
वो मौत को ख़ुद क्यों दावत दे, जिसको दुनिया में जीना है।



'अज़ीज़' के शेर

मिर्ज़ा मुहम्मद हादी 'अज़ीज़'

अहद में तेरे, ज़ुल्म क्या न हुआ ;
ख़ैर गुज़री कि तू ख़ुदा न हुआ।
इश्क़ की रूह को दिया सदमा ;
ज़िन्दगी में अगर फ़ना न हुआ ॥

उलझन का इलाज आह, कोई काम न आया ;
जी खोलके रोया भी तो आराम न आया।
दिल सीने में जब तक रहा, आराम न आया,
काम आयगा किसके, जो मेरे काम न आया।
बिजली-सी कोई शै मेरे सीने में कभी थी,
सोचा तो बहुत, याद मगर नाम न आया ॥

देख कर हर दरो-दीवार को हैराँ होना ;
वह मेरा पहिले-पहल दाख़िले-ज़िन्दाँ होना।
उफ़, मेरे उजड़े हुए घर की तबाही देखो ;
जिस के हर ज़र्रे पै छाया है बियाबां होना ॥

कुछ रंग 'अज़ीज़' अब नज़र आता है मुझे और,
शायद कि ये दर्द आज से उठकर न उठेगा ॥

जुल्म करते हैं ये ज़ालिम कि दवा करते हैं ;
चारा-साज़ों से यह पूछो तो कि क्या करते हैं ।
कान धरकर कभी सुन आओ कहानी दिल की ;
होठ बीमारे-मुहब्बत के हिला करते हैं ।
क्यों लरजती है ये ज़िन्दाँ की इमारत देखो ;
क्यों वो लाशों को असीरों की रिहा करते हैं ।
क्या कहूँ आप से हाले-दिले-बीमार 'अज़ीज़';
वक़्त अब वो है कि दुश्मन भी दुआ करते हैं ॥

रात दिन देखे है आँखों ने कुछ ऐसे हादिसे ;
दिल नहीं लगता 'अज़ीज़' इस ख़ाक की तामीर में ॥

जहाँ में काश ! पैदा ही न होते ;
न बन पड़ता है हँसते और न रोते ।
अगर बढ़ती है मेरे दिल की धड़कन ;
वो चौंक उठते हैं शबको सोते सोते ।
कहें यह राज़ क्या ऐ ! हँसनेवाले !
अगर जीते तो कुछ दिन और रोते ।

बहुत झगड़े रहे फ़ुर्क़त की शब तक;
न दुनिया थी, न हम थे सुबह होते होते।
ये किसने ख़्वाब में जल्वा दिखाया ;
यों ही हम रह गये सोते के सोते।
'अज़ीज़' अब ज़ब्त से भी काम ले कुछ ;
अरे मर जायगा क्या रोते रोते ॥

हम गुज़श्ता सुहबतों को याद करते जाएंगे ;
आनेवाले दौर भी यों ही गुज़रते जाएंगे।
कब अकेले इस जहाँ से हम गये ;
लेके अपने साथ एक एक आलम गए।
फूट निकला ज़हर सारे जिस्म में,
जब कभी आँसू हमारे थम गए।
फिर किसीने भी न पूछा ऐ 'अज़ीज़' ;
क़ब्र तक सब साहबे-मातम गए।

दिल ने एक बात न मानी मेरी ;
मिट गयी हाय जवानी मेरी।

मज़ा न देगी भला तुमसे दास्ताँ मेरी ;
कहाँ ज़बाँ तुम्हारी, कहाँ ज़बाँ मेरी ॥



दर्द भरे शेर

असग़र हुसैन 'असग़र' गोन्डवी

सुनता हूँ बड़े ग़ौर से अफ़सानए-हस्ती;
कुछ ख़्वाब है, कुछ अस्ल है, कुछ तर्ज़े-अदा है॥

रूदादे-चमन सुनता हूँ इस तरह क़फ़स में;
जैसे कभी आँखों से गुलिस्तां नहीं देखा॥

तेरे जल्वों के आगे हिम्मते-शरहो-बयाँ रख दी;
ज़बाने-बेनिगह रखदी, निगाहे-बेज़बाँ रख दी।
नियाज़े-इश्क़ को समझा है क्या ए! वाइज़े-नादाँ;
हजारों बनगए काबे जबीं मैने जहाँ रख दी।
क़फ़स की याद में यह इज़्तराबे-दिल मआज़ल्ला;
कि मैंने तोड़कर एक एक शाख़े-आशियाँ रख दी।
इलाही, क्या किया तूने कि आलम में तलातुम है;
गज़ब की एक मुश्ते-ख़ाक ज़ेरे-आसमां रख दी॥

ये भी फ़रेब से हैं कुछ दर्दे-आशिक़ी के;
हम मर के क्या करेंगे, क्या लिया है जी के।
महसूस हो रहे हैं बादे-फ़ना के झोंके॥
खुलने लगे हैं मुझपर असरार ज़िन्दगी के॥

जीना भी आ गया, मुझे मरना भी आ गया,
पहचानने लगा हूँ तुम्हारी नज़र को मैं।
'असग़र' मुझे जनून नहीं लेकिन ये हाल है;
घबरा रहा हूँ देख के दीवारो-दर को मैं ॥

आलम की फ़ज़ा पूछो महरूमे-तमन्ना से;
बैठा हुआ दुनिया में, उठ जाए जो दुनिया से ॥

गो नहीं रहता कभी पर्दे में राज़े-आशिक़ी;
तुमने छुपकर और भी उसको नुमायाँ कर दिया ॥

किस क़दर पुरकैफ़ है टूटे हुए दिल की सदा;
अस्ल नग़मा एक आवाज़े-शिकस्ते-साज़ है ॥

जब अस्ल इस मजाज़ी-हक़ीक़त की एक है;
फिर क्यों फिरा रहे हैं इधर से उधर मुझे ॥

हम इस निगाहे-नाज़ को समझे थे नेशतर;
तुमने तो मुस्कराके रगे-जाँ बना दिया।

सौ बार तेरा दामन हाथों में मेरे आया;
जब आँख खुली देखा, अपना ही गरेबाँ है।
आग़ोश में साहिल के क्या लुत्फ़े-सकूँ इसको;
ये जान अज़ल ही से परवर्दए-तूफ़ाँ है ॥

जो नक़्श है हस्ती का धोका नज़र आता है ;
परदे पे मुसव्विर ही तनहा नज़र आता है ।
लौ शमए-हक़ीकत की अपनी ही जगह पर है ;
फ़ानूस की गरदिश से क्या क्या नज़र आता है ॥

नग़माए-पुरदर्द छेड़ा मैंने इस अन्दाज़ से ;
ख़ुद-बख़ुद मुझ पर नज़र पड़ने लगी सैयाद की ॥

कुछ इस अदा से मेरा उसने मुद्दआ पूछा,
ढलक पड़ा मेरी आँखों से गौहरे-मक़सूद ॥

है अब तो तमन्ना कि किसीको भी न देखूँ ;
सूरत जो दिखा दी है तो ले जाओ नज़र भी ॥

दैरो-हरम भी मंज़िले-जानाँ में आए थे ;
पर शुक्र है कि बढ़ गए दामन बचा के हम ।

उट्ठे अजब अन्दाज़ से वो जोशे-गज़ब में ;
बढ़ता हुआ इक हुस्न का दरिया नज़र आया ॥



नहीं होता

अली सिकंदर साहब 'जिगर' मुरादाबादी

अब तो ये भी नहीं रहा इहसास। दर्द होता है या नहीं होता।
इश्क़ जब तक न कर चुके रुसवा। आदमी काम का नहीं होता॥
टूट पड़ता है दफ़अतन जो इश्क़। बेशतर देरपा नहीं होता।
हाय! क्या होगा तबीयत को। ग़म भी राहत-फ़ज़ा नहीं होता॥
दिल हमारा है या तुम्हारा है। हमसे ये फ़ैसला नहीं होता।
जिस पे तेरी नज़र नहीं होती। उसकी जानिब ख़ुदा नहीं होता॥
मैं कि, बेज़ार उम्र भर के लिए। दिल कि,दम भर जुदा नहीं होता।
वो हमारे क़रीब होता है। जब हमारा पता नहीं होता॥
दिल को क्या क्या सकून होता है। जब कोई आसरा नहीं होता।

हो के एक बार सामना उनसे।
फिर कभी सामना नहीं होता॥



दो शेर

सैय्यद अहमद हुसैन 'अमजद'

बचपन ही के पहलू में जवानी भी तो है;
बाक़ी ही के आग़ोश में फ़ानी भी तो है।

समझे हो ग़लत रूह जुदा, जिस्म जुदा;
जो बर्फ़ की शकल है वो पानी भी तो है॥

मैं इस दरियाए-मौज़ज़न में,
मानिन्दे हुबाब उभर रहा हूँ।
हर सांस में फांस की खटक है,
फिर भी जीने पै मर रहा हूँ॥



'चकबस्त' के चन्द शेर

पंडित ब्रजनारायन 'चकबस्त'

नयी तहज़ीब के सदक़े, न शरमाने दिया दिल को;
रहे मन्तक़ के परदे में करिश्मे-बेहयाई के ॥

चमन-ज़ारे मुहब्बत में उसीने बाग़बानी की;
कि जिसने अपनी मेहनत ही को मेहनतका समर जाना ॥

दरे-ज़िन्दाँ पे लिखा है किसी दीवाने ने—
'वही आज़ाद है जिसने इसे आबाद किया'॥

हम पूजते हैं बाग़े-चमन की बहार को;
आँखों में अपनी फूल समझते हैं ख़ार को।

आए थे जिस चमन से वो बरबाद हो गया;
अब हम क़फ़स में याद करें क्या बहार को।

लाया है क्या पयामे-वतन पूछता हूँ मैं;
गुरबत में देखता हूँ जो अब्र-बहार को ॥

दर्दे-उल्फ़त ज़िन्दगी के वास्ते अकसीर है:
ख़ाक के पुतले इसी जौहर से इंसाँ हो गए ॥

जिसकी क़फ़स में आँख खुली हो मेरी तरह;
उसके लिए चमन की ख़िज़ाँ क्या, बहार क्या ॥

दिल-सूरते-आईना जो रोशन नहीं होता;
जुन्नार पहनने से बराहमन नहीं होता ॥

आग़ोश

अली सिकंदर साहब 'जिगर' मुरादाबादी

रिंद जो मुझको समझते हैं उन्हें होश नहीं ;
मैकदा-साज़ हूँ मैं मैकदा-बरदोश नहीं ।
कौन-सा जलवा यहाँ आते ही बे-होश नहीं ;
दिल मेरा दिल है कोई साग़रे-सरजोश नहीं ।

मरनेवाले तुझे मरने का भी क्या होश नहीं ;
माँ का आग़ोश है ये मौत का आग़ोश नहीं ।
पाँव उठ सकते नहीं मंज़िले-जानाँ के ख़िलाफ़ ;
औ अगर होश की पूछो तो मुझे होश नहीं ।

हुस्न से इश्क़ जुदा है न जुदा इश्क़ से हुस्न ;
कौन-सी शै है जो आग़ोश दराग़ोश नहीं ।
मिट चुके ज़ेहन से सब यादे-गुज़श्ता के नक़ूश ;
फिर भी एक चीज़ है ऐसी कि फ़रामोश नहीं ।

मुख़्तसर है मेरी रूदादे-मुहब्बत नासिह ;
जिस्म में जान है, जब तक कि मैं ख़ामोश नहीं ।
एक गोशे में सिमट आये हैं दोनों आलम ;
मेरा दामन है, किसी और का आग़ोश नहीं ।

नया चमन

अब तो तासीरे-ग़मे-इश्क़ यहाँ तक पहुँची ;
कि इधर होश अगर तो उधर होश नहीं ।
ज़ीस्त है ज़ीस्त जो रग रग में रवाँ है मए-इश्क़ ;
मौत है मौत अगर रक़्स नहीं, जोश नहीं ।

कभी उन मदभरी आँखों से पिया था इक-जाम ;
आज तक होश नहीं, होश नहीं, होश नहीं ।
अपने ही हुस्न का दीवाना बना फिरता हूँ ;
मेरे आग़ोश में अब हसरते-आग़ोश नहीं ।

मिलके एक बार गया है कोई जिस दिन से 'जिगर' ;
मुझको ये वहम है जैसे मेरा आग़ोश नहीं ॥



भूल

समदयार ख़ाँ 'साग़र निज़ामी'

यह महफ़िल में किसने मधुर गीत गाया ?
संभालो, संभालो मुझे वज्द आया।

सियह ख़ानए-दिल में यह कौन आया ?
ज़मीं मुस्कराई, फ़लक जगमगाया।
बड़ी भूल की हुस्न से दिल लगाया,
दीवाने यह है एक सपने की माया।

मुहब्बत में सूदो-ज़ियाँ की न पूछो,
बहुत हमने खोया, बहुत हमने पाया।
न वह हैं, न मैं हूँ, न दीन और दुनिया,
जनूने-मुहब्बत कहाँ खींच लाया।

ग़ज़ल मेरी 'साग़र' वह नग़मा है जिसको,
जवानी ने लिक्खा मुहब्बत ने गाया॥



यह फूल भी उठा ले

समदयार ख़ाँ 'साग़र निज़ामी'

जल्वे तरे अनोखे, ग़मज़े तेरे निराले,
चितवन है सीधी-सादी, तेवर हैं भोले-भाले;
कुहनो तक आस्तीने, आँचल कमर में डाले,
रुख़सार गोरे गोरे, यह बाल काले-काले।
ओ फूल चुननेवाली !

इक हाथ टोकरी पर, इक हाथ है कमर पर,
ढलका हुआ दुपट्टा, ताजे-ग़रूर सर पर;
है इक नज़र क़दम पर, औ इक क़दम नज़र पर,
क्यों यह ख़राम तेरा, पामाल कर न डाले?
ओ फूल चुननेवाली !

तू फूल चुन रही है, औ फूल झड़ रहे हैं,
बल तेरी त्योरियों में, रह रह के पड़ रहे हैं;
क्या तेरी टोकरी में तारे से जड़ रहे हैं?
हसरत से बाग़वाले फिरते हैं दिल सम्हाले।
ओ फूल चुननेवाली !

फूलों में मैंने अपना दिल भी मिला दिया है,
फूलों में मिल मिलाकर वह फूल बन गया है;
आएगा काम तेरे, यह तेरे काम का है;
ओ फूल चुननेवाली, यह फूल भी उठा ले।
ओ फूल चुननेवाली !

———

बीमार कलियाँ

अख़्तर शीरानी

न फूलों की तमन्ना है, न गुल्दस्तों की हसरत है,
मुझे तो कुछ इन्हीं बीमार कलियों से मुहब्बत है !

अभी उलटा नहीं बादे-बहारी ने नक़ाब इनका ,
अभी महफ़ूज है इक ख़िलवते-रंगीं में ख़्वाब इनका ,
अभी सरमस्तियों में रात-दिन सोने की आदत है।
मुझे तो कुछ इन्हीं..............

अभी टूटा नहीं सूरज की किरनों से हिजाब इनका ,
अभी रुसवा नहीं है गुल-फ़रोशों में शबाब इनका ,
अभी छायी हुई दोशीज़गी की सादा रंगत है।
मुझे तो कुछ इन्हीं..............

बहारिस्तान के मंदिर की इनको देवियाँ कहिये ,
जो गुल को कृष्ण कहिए, इनको उसकी गोपियाँ कहिए ,
कोई जामे-मलाहत है कोई काने-सबाहत है।
मुझे तो कुछ इन्हीं..............

कोई छू ले अगर इनको, तो यह कुम्हला के रह जाएँ,
हया में इस क़दर डूबें कि बस मुरझा के रह जाएँ,
अभी अल्हड़पन के दिन हैं, शरमाने की आदत है।
मुझे तो कुछ इन्हीं................

मेरा बस हो तो 'अख़्तर' मैं इन्हींका रंग हो जाऊँ,
हमेशा के लिए इन चंपई परदों में सो जाऊँ,
मुझे इनकी रसीली गोद में मरने की हसरत है।
मुझे तो कुछ इन्हीं................



हम्द

हफ़ीज़ जालंधरी

ऐ दो जहाँ के वाली !
ऐ गुलशनों के माली !

हर चीज़ से है ज़ाहिर हिकमत तेरी निराली।
तेरे ही फ़ैज़ से है सर-सब्ज़ डाली डाली।
पत्तों में तेरी रंगत फूलों में तेरी लाली।

यह सिलसिला जहाँ का
दुनिया के गुलसिताँ का,

फूलों भरी ज़मीं का तारों का, आसमाँ का।

सारा है काम तेरा—
प्यारा है नाम तेरा।

यह ख़ाक, आग, पानी
है तेरी मेहरबानी।

हरदम हवा के लब पर है तेरी ही कहानी।
ऊँचे पहाड़ चुप हैं देकर तेरी निशानी।
है दम-क़दम से तेरे दरियाओं में रवानी।

हर बह्र और बर में
हर खुश्क और तर में,
हर बीज औ शजर में हर शाख़, हर समर में।
है फ़ैज़ आम तेरा
प्यारा है नाम तेरा।

तू ने हमें बनाया,
औ सोचना सिखाया।
हर शै में हमने देखा तेरे करम का साया।
जिस रास्ता में ढूँढ़ा तेरा निशान पाया।
ख़ालिक़ है तू खुदाया मालिक है तू खुदाया।
इन्सान भी हैं तेरे
हैवान भी हैं तेरे,
जाँदार भी हैं तेरे, बेजान भी हैं तेरे।
हर एक गुलाम तेरा,
प्यारा है नाम तेरा।



पपीहा

जगतमोहन साहेब खाँ

वही तान फिर सुना दे, मेरे खुशनवा पपीहे,
मेरे दिलरुबा पपीहे, मेरे खुशअदा पपीहे ।
उसी दर्द-मन्द दिल से उसी सौतए-मुज़महिल से,
तेरे इश्क़ के तसद्दुक वही राग गा पपीहे ॥

卐

मेरी नींद उचट गयी है, तेरी सौत जाँ-फ़िज़ा से,
दिले-मुज़तरिब है बेकल, उसे तू सुला पपीहे ।
ये घटायें काली-काली, ये हवा के सर्द झोंके,
तुझे गुदगुदा रहे हैं कि तू कुछ सुना पपीहे ॥

卐

तुझे जिस तरह है हासिल, यह कमाल इश्क़ नैसाँ,
वही राह व रस्म उलफ़त, मुझे भी सिखा पपीहे ।
यह धरा है नुसख़ा-ए-दिल ! यह खुला है बाब वहदत,
जिसे फिर कभी न भूलूँ, वह सबक़ पढ़ा पपीहे ॥

कोइ रूए-गुल दिखा दूँ, किसी सर्व से मिला दूँ,
तेरी बेकली का आखिर है इलाज क्या पपीहे।
तेरा सब्र औ तवक्कुल, तेरा ज़ब्त औ क़नाअत,
तुझे आफ़रीं पपीहे, तुझे मरहबा पपीहे॥

卐

यह ग़ज़ब की आहोज़ारी यह बला की बेक़रारी,
तुझे किसका है तसव्वुर, अरे कुछ बता पपीहे॥



उर्दू शायरी में आनेवाले चन्द लफ़्ज़

अज़ल—सृष्टि का पहला दिन।

अनलहक़—मैं ईश्वर हूँ; 'अहं ब्रह्मास्मि', ईरान के दार्शनिक मंसूर के सिद्धान्त जो सूफ़ी मत का आधार बने।

अहबाब—मित्र वर्ग। सूफ़ियों के मतानुसार जो ईश्वर के साथ सखाभाव रखते हैं।

आशिक़—प्रेमी; प्रेम करनेवाला। उर्दू-फ़ारसी के कवि अपने को आशिक़ और ईश्वर और कभी कभी गुरु को माशूक़ कहकर सम्बोधित करते हैं। सूफ़ी कवियों का यही ढंग था।

आसमान—चर्ख़; आकाश; दैव; भाग्य-विधाता। उर्दू कवि आसमान को सदा निर्दयी और अत्याचारी बताते हैं—काल या दुर्दैव की तरह।

इश्क़—प्रेम। यह दो तरह का होता है (१) इश्क़ हक़ीक़ी अर्थात् शुद्ध या भगवत्प्रेम और (२) इश्क़ मज़ाज़ी यानी सांसारिक प्रेम, जिसे माया-जाल भी कहा जाता है।

क़फ़स—ज़िन्दाँ; बन्दीगृह। उर्दू कवि संसार को भी क़फ़स कहते हैं।

क़यामत—प्रलय; हृदय-विदारक या अद्भुत दृश्य। प्रलय का दिन, जब क़ब्रों में मुर्दे जी उठेंगे और ईश्वर उनका न्याय करेगा। The day of judgement.

काबा—ईश्वर का घर; मुसलमानों का मुख्य तीर्थ-स्थान—जो मक्का में है। सूफ़ी लोग सौंदर्य के पूजक होते हैं। इसलिए काबा की हँसी भी उड़ाते है। कवि कभी कभी माशूक़ के घर को भी काबा कहते हैं।

काफ़िर—नास्तिक, ईश्वर को न माननेवाला। सूफ़ी ईश्वर के सम्बन्ध में कट्टरता का भाव नहीं रखते। इसीलिए शायर कभी कभी अपने को काफ़िर कहते हैं। माशूक़ को भी काफ़िर कहते हैं।

क़ैस—मजनूँ। पागल और प्रेमी के अर्थ में भी प्रयोग करते हैं।

गुल—गुलाब का फूल। उर्दू कवि अपने माशूक़ को गुल और आशिक़ को बुलबुल कहते हैं। प्रियतम, सुन्दर।

चर्ख़—आसमान।

जफ़ा—ज़ुल्म, अत्याचार। आशिक़ के प्रति माशूक़ का निर्दय व्यवहार।

ज़ालिम—ज़ुल्म करनेवाला; माशूक़।

ज़िन्दाँ—क़फ़स।

जुलेख़ा—मिस्र की रानी, जो यूसुफ़ पर मोहित थी।

तूर—एक पवित्र पहाड़, जो अरब के उत्तर में है। हज़रत मूसा को यहीं पर ईश्वर ज्योति के रूप में दिखाई पड़े थे और वे बेहोश हो गए थे। उस ज्योति को तूर का जल्वा भी कहते हैं।

दैर—मन्दिर। सूफ़ियों के मुताबिक़ माशूक़ या ईश्वर का निवास-स्थान।

दोस्त—माशूक़। सूफ़ियों के अनुसार ईश्वर और कभी कभी गुरु।

परवाना—पतंग; शमा का प्रेमी; आशिक़।

बज़्म—नाच-रंग की सभा।

बुत—प्रतिमा; सौन्दर्य की प्रतिमा; माशूक़।

बुतख़ाना—दैर, मन्दिर।

बुलबुल—ईरान की एक चिड़िया जो मौसमे-बहार में गुलाब के फूल के चारों ओर चक्कर लगाती और गाती है। हिन्दुस्तान में जिसे

बुलबुल कहते हैं—उससे यह चिड़िया भिन्न है। बुलबुल आशिक़ के अर्थ में भी आता है।

मजनूँ—क़ैस, पागल।

मर्ग—मौत; अजल। प्रायः हर्षोन्माद या विरह की पीड़ा की अधिकता के लिए भी इसका प्रयोग होता है।

महशर—क़यामत।

माशूक़—प्रियतम—सांसारिक प्रेम में। अलौकिक प्रेम में—ईश्वर। प्रायः माशूक़ बहुत सुन्दर और सुकुमार वर्णित होता है—मगर अन्दर से वह बड़ा कठोर और निर्दयी होता है। उर्दू में माशूक़ का पुल्लिंग में भी प्रयोग करते हैं।

मूसा—यहूदी पैग़म्बर; जिसने तूर की पहाड़ी पर जल्वा देखा था।

मय—मै, मदिरा। सूफ़ी गुरु के उपदेश और ईश्वर-प्रेम को भी मय कहते हैं। ज़्यादातर यह शब्द इसी अर्थ में आता है।

मंसूर—ईरान का वह वेदान्ती, जिसको 'अनलहक़' का ज्ञान हो गया था। सूफ़ी मत का संचालक। मौलवियों ने उसे काफ़िर कहकर शूली पर चढ़ा दिया।

यास—पूरी निराशा; जहाँ सारी चिन्तायें दूर हो जाती हैं।

यूसुफ़-जुलेख़ा—यूसुफ़ मुसलमानों के एक पैग़म्बर थे। कहते हैं कि ये बड़े सुन्दर थे। इनके भाइयों ने इन्हें कुएँ में ढकेल दिया। कुछ व्यापारी इन्हें निकालकर मिस्र के बाज़ार में ले गये। मिस्र की रानी जुलेख़ा इन पर मोहित हो गयी। ख़रीद कर अपने वश में करना चाहा। ये न माने तो जेल में डाल दिया। जब मिश्र का राजा मर गया तो इन्होंने जुलेख़ा से शादी कर ली और मिस्र के राजा हो गए। यह समाचार जब इनके पिता को मालूम हुआ तो बूढ़े की आँखों में फिर से नूर आ गया। फ़ारसी-साहित्य में यूसुफ़

ज़ुलेख़ा की प्रेम-कहानी बहुत प्रसिद्ध है। उर्दू कवि माशूक़ को भी सुन्दरता केलिए यूसुफ़ कहते हैं।

लैला-मजनू—अरबी-फ़ारसी साहित्य में इनकी प्रेम-कथा बहुत प्रचलित है। इनका प्रेम आदर्श-प्रेम माना जाता है। ये अरब के रहनेवाले थे। मजनू लैला के लिये पागल हो जंगलों में मारा-मारा फिरता रहा। और अन्त में वह निराश प्रेमी मर गया।

वाइज़—नासेह, धर्मोपदेशक, शेख़। सूफ़ी तथा दूसरे फ़ारसी और उर्दू के शायर इसे पाखण्डी और मूर्ख कहकर हँसी उड़ाते हैं।

शीरीं-फ़रहाद—ईरान के प्रसिद्ध प्रेमी-प्रेमिका। ग़रीब फ़रहाद जो—चीन का चित्रकार था—फ़ारस की बालिका शीरीं के सौंदर्य पर मोहित हुआ; शीरीं भी उसे चाहने लगी। मगर फ़ारस का बादशाह ख़ुसरो उस से शादी करना चाहता था। उसने चढ़ाई भी कर दी। इस पर शीरीं ने बादशाह से शादी करना मंजूर कर लिया और ख़ून-ख़राबी रोक दी। मगर फ़रहाद उसके पीछे पागल बना ही रहा। अन्त में ख़ुसरो बादशाह ने फ़रहाद से कहा कि अगर तुम फलाना पहाड़ खोदकर उससे नहर निकालो तो शीरीं तुम्हें मिल जायगी। दीवाने फ़रहाद ने यह शर्त भी मान ली और प्रेम की अद्‌भुत शक्ति से यह काम समाप्त कर डाला। ख़ुसरो ने जब यह देखा तो घबराया और उसने एक साजिश की। उस तरफ़ से झूठा जनाज़ा निकलवाया और फ़रहाद को कहलवा दिया कि शीरीं मर गयी, उसका जनाज़ा निकला है। यह सुन फ़रहाद ने हथियार कलेजे में भोंक लिया और वहीं ढेर हो गया। जब यह ख़बर शीरीं को मिली तो वह भी दौड़ी आयी और फ़रहाद की लाश पर गिरकर मर गयी।

सनम—बुत, मूर्ति, प्रियतम, माशूक़।

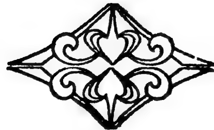
साक़ी—शराब पिलानेवाला, प्रेम-पात्र, प्रियतम, गुरू।

मुआफ़ी

इस किताब की छपाई में कुछ ग़लतियाँ रह गई हैं। उम्मीद है, मेहरबान इस आँख के क़ुसूर को नीचे लिखे मुताबिक दुरुस्त कर पढ़ेंगे और मुआफ़ फ़रमायेंगे।

सफ़ा	सतर	ग़लत	सही
५	२१	मौलान	मौलाना
७	९	बुलबुल के	बुलबुल ने
८	२१	देतहा	देहात
११	५	"थास"	"यास"
११	२५	शायरी म	शायरी में
१८	१९	होलराइड	होलराइट
२४	११	अमीर	मीर
२५	१८	जहानाबादी	जहानाबाद
३१	३	ग़नोवैज्ञानिक	मनोवैज्ञानिक
३२	१०	ज़िला	जिला
३८	९	"नज़्मा" "ज़ार"	"नग़्मा-ज़ार"
४४	११	बर्गा-समर	बर्गो-समर
५६	१२	जईफ़्रों	ज़ईफ़्रों
५८	२	सागर	साग़र
७२	३	पेंगे	पेंगें

सफ़ा	सतर	ग़ल्त	सही
७६	१६	नुक़्ता	नुक्ता
८४	१५	ख़न्दा ज़न	ख़न्दाज़न
९९	१३	मरगूब	मरग़ूब
११३	१७	है	मैं
११४	२	असूले	उसूले
१२९	३	नज़ूमे	नजूमे
१२९	१	बो	वो
१४३	९	लूटने	लुटने
१४४	१५	नूर	नूरे
१४५	४	आग़ोश	आग़ोशे
१५७	६	फ़लक़	फ़लक
१६३	७	सौत	सौते



'नया चमन' की कुंजी

अब तक जो हिन्दी-प्रेमी भाई या हिन्दी प्रचारक सिर्फ़ हिन्दी कविता पढ़ते-पढ़ाते आ रहे हैं, उनके वास्ते 'नया चमन' कुछ नया-सा ही होगा। उन्हीं की ज़रूरतों को मद्दे-नज़र रखकर यह नोट तैयार किया गया है। उम्मीद है, इससे उन्हें कुछ मदद मिलेगी। अगर ज़रूरत महसूस हुई और भाइयों ने सुझाया तो अगली बार और कुछ जोड़-जाड़ कर दिया जायगा। भूलें रह गयी हों तो सुझाने पर हम शुक्रगुज़ार होंगे।

इस नोट को शुरू से आख़िर तक अपना क़ीमती वक़्त लगाकर हमारे अज़ीज़ दोस्त मौ० सय्यद मुहम्मद फ़ज़लुल्लाह साहब, एम.ए.,एल.टी; देख गए हैं, अपने सुझाव दिये हैं। इसके वास्ते 'सभा' उनका एहसानमन्द रहेगी। वे सरकारी ओरियंटल मैनस्क्रिप्ट लाइब्रेरी के क्यूरेटर हैं, फिर भी जब कभी ज़रूरत हो, 'सभा' की इमदाद के वास्ते तैयार रहते हैं। इसलिये हम लफ़्ज़ों में उनका शुक्रिया अदा ही कैसे कर सकते हैं? हाँ, हमारे पाठक उनके ज़रूर शुक्रगुज़ार रहेंगे।—व्रजनन्दन.

पहली बहार



दुआ

दुआ - प्रार्थना
आलम - दुनियाँ
बिस्तरे-राहत - सुख की नींद; सुख देनेवाला बिछौना।
ख़ाब - नींद, स्वप्न
जनाब में - हुज़ूर में, सामने
सूरते-उम्मीदवार - उम्मीदवार की हालत
रब - ख़ुदा
इलतिजा - प्रार्थना, आरज़ू
करम - दया

[भावार्थ—जिस तरह हिन्दू कवि गणेश या सरस्वती की वन्दना करते हैं, उसी तरह शायर ने ख़ुदा से प्रार्थना की है कि उसकी ज़बान में वह ताक़त आये, जिससे सुननेवालों पर उसका असर हो। मतलब—कविता ऊँचे दर्जे की हो।]

हुब्बे-वतन



हुब्बे-वतन - देश का प्रेम
बन्दाए-वतन - देश का सेवक
ख़ाबे-ग़फ़लत - भ्रम की नींद
बेदार - जागृत
अहले-शहर - शहर (बस्ती) के लोग
'लौ…लगी' - क्या कभी अपने शहर वालों के प्रति प्रेम प्रदर्शित किया है?
नक़शा - चित्र
कूचाओ-बाज़ार - गली-कूचा
आँखों में फिरना - (मुहा०)याद रहना
दरो-दीवार - घर-द्वार
उलफ़त - प्रेम
'उल्फ़त…है' - यह प्रेम नहीं है
दरिन्द - जंगली जानवर
चरिन्द - चरनेवाले, पशु, जानवर
परिन्द - परवाले, पक्षी

संग - पत्थर
गुर्बत - परदेश का निवास
'टुकड़े···में'—परदेस में पत्थर से दिल भी देश और देशवासी के प्रेम में पिघल जाते हैं।
रूख - पेड़
फ़ुर्क़त - वियोग, विरह
परवान चढ़ना - उन्नति पाना, बढ़ना
याँ - यहाँ
बिही - नाशपाती, Berry.
बास्वर - बासवर, बासवाले, टिकनेवाले
जिन्हार - जिनहार, जीनेवाले
जान के लाले पड़ना - (मुहा०) संकट में फँसना
हैवाँ - जानवर
कमतर - कम, नीच
हम-वतन - एक देश के रहनेवाले
अहले-वतन - देश के लोग
लुत्फ़ - मज़ा, आनंद
अश्क - आँसू
ना-दार - ग़रीब
ग़िज़ा - आहार, भोजन
जूतियों से - जूता पहनकर
मयस्सर - प्राप्त, मिलना
नेसती - अभाव, ग़रीबी
उतरन - छोड़ा हुआ, उतारा हुआ
बनाओ - बनाव, शृंगार
बर्गो-समर - पत्ते व फल (यहाँ संतान से मतलब है)
ख़ुश्क - सूखा
तर - हरा
अस्ल - असल, सत्य
पैवन्द - जोड़, बन्धन
आज़ुर्दा - दुखी
ख़ुर्सन्द - ख़ुश
ग़ाफ़िल-भूला हुआ
पैरना - तैरना

नया शिवाला



शिवाला - शिव का मंदिर
बरहमन - ब्राह्मण
गर - अगर
सनम-क़दा - मन्दिर
बुत - मूर्ति
जदल-अदल - लड़ाई-झगड़ा

दैर - मन्दिर
हरम - काबा
वाइज़ - उपदेशक
वाज़ - उपदेश
फ़िसाना - कहानी
ख़ाके-वतन - देश की मिट्टी
ज़र्रा - कण, अणु
ग़ैरियत - परायापन
नक़्शे-दुई - भेद-भाव
दामाने-आसमाँ - आसमान का सिल-सिला
मय - शराब
पीत - प्रीति, प्रेम
शानती - शान्ति
पिरीत - प्रीत, प्रेम

उठ बाँध कमर



दम भरना - (मुहा०) मानना, समर्थन करना
कुव्वत - ताक़त
सिमटी - छोटी बनी हुई
ख़िलाफ़त - राज्य (ख़लीफ़ा से बना)
तहज़ीब - सभ्यता
गुलशन - बग़ीचा
गरदूँ - आसमान
सबा - हवा

सीताजी की आरज़ू



हमराह - एक राह पर चलनेवाले, साथी, पती-पत्नी
नाज़ुक - कोमल
शीशाए-दिल - शीशा जैसा हृदय
जी छूटना -(मुहा०)चित्त व्याकुल होना
फ़िराक़ - वियोग, विरह
'घड़ियाँ···फ़िराक़ में' - जिसकी विरह की आदत हो वह झेले, मुझे वह आदत नहीं। मैं विरह नहीं बर्दाश्त कर सकती।

शामो-सहर - शाम-सुबह, बराबर,
पहलू - दिल, बग़ल
शिकेब - धैर्य, सहनशीलता
ग़मे-रोज़गार - हर रोज़ का दुख, बराबर दुख ही दुख
करम - दया, कृपा
दश्त - जंगल
ग़मो-आलाम - दुख, रंज (बहु व०)
ईज़ा - तकलीफ़

अगरचे - यद्यपि
आबला-पाई - पैरों के फफोले
दोज़ख़ - नरक, जहन्नुम
मज़तर - बेचैन, मुज़तर
अलम-क़दा - पहाड़ का निवास
खस-पोश - खस (सुगंधित जड़ें) से बनी झोंपड़ी
सनम-क़दा - प्रियतम का गृह
सहरा - जंगल, मैदान

भलाई का पैग़ाम



पैग़ाम - संदेशा
खाक का पुतला - मनुष्य
मुँह में दाँत होना - (मुहा०) शक्तिवान होना
खाया-पिया क्या है - क्या भोगा है ?
खैरात - दान
राहे-मौला - मौलाकी राह, ख़ुदा की राह
आक़बत - भविष्य
तोशा - राह खर्च, खाने-पीने की चीज़
तफ़्तः - जला हुआ
राहत-रसाँ - आराम पहुँचानेवाला
तिशना - प्यासा

दहाना - मुँह, दहान
शरीके-दर्दे-दिल - किसी की वेदना में (शरीक़) हिस्सा लेकर
आफ़तज़दा - आफ़त में फँसा
बेकस - विवश, लाचार, दुखी
मुफ़लिस - ग़रीब
ग़म-ग़लत करना - दुःख भूलना
रबाब - सारंगी की तरह का बाजा
चंग - चमड़े से मढ़ा बाजा
दिल-सोज़ - करुण (कृपालु)
नग़मा - राग, सुरीली आवाज़
साज़े-ख़ुश-आहंग - सुन्दर बाज़ों का संगीत, रसीली आवाज़

तिशनाकामी - प्यास
आबे- आतिश-रंग - आग के रंग व गुणवाला पानी, शराब
शग़्ल - मनोरंजन, काम
जामो-मीना - प्याला और शराब की [बोतल
बे-नवा - ग़रीब
नानें - रोटियाँ
शबीना - बासी, रात का
शादमाँ - ख़ुश
ख़िज़ाँ - पतझड़, अवनति
मुवाफ़िक़ - अनुकूल
आसमाँ - ईश्वर, समय, काल
ताबके - कब तक
मसरूफ़ - मग्न
उम्रे-रवाँ - उम्र की रवानगी, बीतती हुई उम्र
पानी का रेला - पानी की धारा, (भाव) दुनियवी बातों में
हशमत - शान-शौक़त
शौक़त - रोब, बल, ताक़त
रफ़अत - उच्चता, बड़ाई
पसे-मुर्दन - मौत के बाद
शाने-इमारत - बड़े मकान की शान
अज़मत - बड़ाई
महशर - क़यामत, the day of judgment.
ऐमाल - काम, कर्म
अफ़आल - ,, ,,

नौवारिदे हस्ती



कि - के (क्या के अर्थ में)
नौवारिदे हस्ती - नया आया हुआ प्राणी
दुनिआए-ख़न्दाँ - हँसी की दुनिया
ज़री - सुनहला, सोने का
जज़ीरा - टापू, द्वीप (देश)
फ़िरदौस - स्वर्ग
नज़्ज़ारे - दृश्य
नक़्श - चीज़ें
यूँ - यों
मुत्लक़न - बिल्कुल, ज़रा
ना-आशना - अपरिचित
सरज़मीन - जगह, ज़मीन
आफ़ियत - आराम, चैन

दिलख़्वाह - पसन्द की

हुवैदा - ज़ाहिर, प्रकट

पाको-रोशन - पवित्र और उज्ज्वल

अर्श - आसमान

इन्किलाबात - इन्किलाब का बहु०

बाग़-रिज़्वाँ - स्वर्ग का बग़ीचा

मायूस - उदास, मायूस

ग़ुर्बत - परदेस

इत्मीनान - शांति

शामिले-अरमाने-दिल - दिल की अभिलाषाओं में शामिल

मीठी लोरी



लोरी - बच्चों को सुलाने के गीत

हीरे - (भाव) आँखें

क़ुर्बान जाना - (मुहा०)बलिहारी, जान देना, निछावर होना (बहुत ज़्यादा प्यार के भाव में)

हुजूम - भीड़

माते - मत्त, मग्न, मस्त

स्नेहलता



सिन - उम्र

तेरा-चौदा - तेरह-चौदह

दिलरुबा - मनोहर

अन्दाज़ - ढंग, अदा

बर भला - बढ़िया, श्रेष्ठ

"सेहर······सूए तो" - (फ़ारसी) तेरी आँखों से नर्गिस लजाती है; तेरी लटों ने जटामासी को परेशान कर रखा है।

शबाब - जवानी

इफ़्लास - ग़रीबी

आशुफ़्ता - घबराया हुआ

कम अज़ कम - कम से कम

वार - चोट, तकलीफ़, भार

दस्तगीर - सहारा, हाथ पकड़नेवाला

ईशवर - ईश्वर

चार में - लोगों में

शौहरो-ज़न - पति-पत्नी

फ़हमीदा - चतुर, बुद्धिमती
गश-खाना - बेहोश होना
तुफ़ - धिक्कार
अज़राहे-करम - बराये मेहरबानी; दया करके
किरिया-करम - क्रिया-कर्म, श्राद्ध
रोग़न - तेल
शमअ - दीपक
काफ़ूर - कपूर
"हाथ.......लगी" - मौत भी दुख से हाथ मलने लगी, मौत को भी बहुत दुख हुआ।
सोला-फ़ाम - अग्नि के रंगवाली
तमाम - ख़तम, अन्त

लड़कियों से



[कवि पश्चिम की सभ्यता से दूर रहकर अपनी संस्कृति और देश की रक्षा करने के वास्ते लड़कियों से अपील करता है।]

रविश - रास्ता
ख़ाम - बुरा
दाग़ - कलंक, ख़राबी
नुमाइश - प्रदर्शिनी, दिखावा
बूए-वफ़ा - गन्ध-गुण
तफ़रीह - मनोरंजन, मज़ाक
मरकज़ - केन्द्र, स्थान
मासूम - अबोध
मक़तब - पाठशाला
जानू - गोद, जाँघ
गो - यद्यपि
लय - तर्ज़, धुन
जईफ़ - बूढ़े
तईं - लिए (अपने लिए)

प्यासी नदी



[नदियों में पैसे फेंकने से पुण्य मिलता है, यह भाव हिन्दुओं में है। इसलिये आजकल प्रायः पुल पर से रेल के गुज़रते समय भावुक हिन्दू यात्री पानी में पैसे फेंकते हैं।]

पास - ख़्याल

ख़ून की नद्दी - (गरीबों से मतलब है)

ख़ुश्क - सूखना

कार-आमद - उपयोगी काम

आब - पानी (धारा)

कारे-ना-सवाब - ग़लत काम, बुरा काम

आब-आब होना - (मुहा०) पानी-पानी होना, शरमाना, (गंगा का पानी पानी होना बड़ा सुन्दर अर्थ देता है।)

बाज़ुए-ज़र - अमीर, धनवान

नाख़ुदाई - खेना

क़श्ती - नाव

ना-वक़्त - असमय

पानी सर से ऊँचा होना - (मुहा०) डूब जाना, ख़तम हो जाना,

सारा हिन्दुस्तान हमारा



हर आन - हर क्षण, हमेशा

गुलज़ार - बाग़

कुहसार - पहाड़

कूचा - गली

ख़ार - काँटा

कुव्वत - ताक़त

रौनक़ - शोभा, छटा

धनुक - इन्द्र-धनुष

शफ़क़ - उषा, संध्याराग

ज़र्रा - अणु

दहक़ान - देहाती, किसान

मैख़ाना - शराबख़ाना

बादा - शराब

साग़र - प्याला

पैमाना - मापने का साधन, peg

वीराना - जंगल, उजाड़

महफ़िल - नाच-गान का जमाव, सभा

काशाना - झोंपड़ा

दर - दरवाज़ा

ऐवान - महल

पामाल - ख़राब, गिरी हुई, नष्ट

हर सू - हर जगह

पस्ती - अवनति, गिरावट

फ़ाका - उपवास

शब - रात

ईमान - विश्वास

बार - दरवाज़ा

ख़ाह - चाहे

ख़ुदी - स्वार्थ, व्यक्तित्व, अहंकार

राम



सलोना - सुन्दर

मुतलक़ - बिलकुल, निरा

कुन्दन - तपाया हुआ साफ़ सोना

ख़ालिस - विशुद्ध

अबरू - भौंह

कमान - धनुष

सर ता पा - सर से पाँव तक

गहवारा - पालना

रूह - आत्मा

रसिया - रसिक, आनन्दमय

उल्फ़त - प्रेम

कौल - वचन, बात, वादा

इलहाम - दैवी वाणी

परचम - झंडा, पताका

बाँका - सुन्दर

बालम - प्रियतम, प्रभु

कह दूँगा तो झगड़ा होगा - राम ईश्वर के अवतार थे, यह कहा जाय तो कुछ लोग नहीं मानेंगे। इस पर झगड़ेंगे। इसलिये न कहना ही ठीक है।

रूहे-शुजाअत - बहादुरी की आत्मा

जानेशुजाअत - बहादुरी की जान

हूर - परी, अप्सरा

नूर - शोभा, प्रकाश

अदल - न्याय

पैकर - प्रतिरूप, embodiment, मुख, चेहरा

दोश - कंधा

अनवार - चमकीला

गाँधी



साधो - साधू, भाई, (संबोधन)

बंसी का मतवारा - कृष्ण

बातिन - अन्त:करण, आत्मा

ज़ाहिर - प्रकट, देखने में

बेचारा - ग़रीब, निर्बल

प्यासे सामंत की लड़ाई



[अरब में यज़ीद उमैया ख़ानदान का दूसरा ख़लीफ़ा था। हज़रत इमाम हुसैन पैग़म्बर साहब के नवासे —लड़की के लड़के—थे। यज़ीद की हुकूमत को सबने मान लिया,मगर हज़रत इमाम हुसैन ने उसकी हुकूमत नहीं मानी — बय्यत से इंकार कर दिया। कूफ़ा सूबे के रहनेवाले भी यज़ीद को नहीं मानते थे। यज़ीद उन लोगों पर तरह तरह के अत्याचार कर रहा था। तंग आकर कूफ़ावालों ने हज़रत हुसैन को अपनी मदद के लिए बुलाया। ये अपने ७२ साथियों के साथ मदीने से कूफ़ा को रवाना हुए।

इमाम हुसैन बड़े धर्मनिष्ठ और बहादुर थे। ये तलवार लेते तो फिर मैदान में कुहराम मच जाता। अगर हज़रत इमाम हुसैन कूफ़ा पहुँच जाते तो यज़ीद की हुकूमत टिकती या नहीं, इसमें शक था। इसलिये उसने अपने सिपाहियों को हज़रत हुसैन को रोकने का हुक्म दिया।

फ़रात नदी का किनारा था। इमाम हुसैन ने वहाँ पड़ाव डाला तो यज़ीद के सिपहसालार ने पानी लेने से रोक दिया। वहीं कर्बला के मैदान में लड़ाई शुरू हुई। अन्त समय में कूफ़ा वालों ने इनके साथ दग़ा की—मदद नहीं दी। हज़रत हुसैन उसी कर्बला के मैदान में मारे गये। उस वक्त हज़रत हुसैन के घर के लोग भी उनके साथ थे।

इस पद्य में हज़रत अब्बास की लड़ाई का वर्णन है, जो फ़रात से पानी लाने गये थे। पानी पर रोक थी। अब्बास, इमाम हुसैन के चचा और हज़रत अली के भाई थे। 'सकीना' हज़रत अली की लड़की यानी अब्बास की भतीजी थी।

इसमें शायर ने बड़ी ख़ूबी से 'पानी' से बननेवाले बहुत से मुहावरों का प्रयोग किया है। शायरी में करुण रस की धारा बह रही है।]

तपते - गरम होते, धूप में तपते

मुँह फोड़के - बोलकर, मुँह खोलकर

चौकियाँ - पहरा

पत्थर का कलेजा - निर्भीक हृदय

कलेजा पानी होना - (मुहा०) डरजाना

डाँडे - डंडे, छड़ें

फल - बर्छी का लोहेवाला हिस्सा,

पानी - तेज़ी, चमक

लहू पानी होके बहना - पानी की तरह खून बहना

हाथ चलना - वार करना

मँजी - अभ्यस्त, रवाँ

पानी न माँगना - (मुहा०) मर जाना

बाग - घोड़े की लगाम

पानी सर से ऊँचा होना - (मुहा०) मुश्किल होना, ख़तरा आना

तेवर में बल पड़ना - ललाट टेढ़ा होना (मुहा०) गुस्सा आना

काठी - म्यान

नागन - (तलवार से अर्थ है)

तलवार का पानी - तलवार की धार, तेज़ी

छेड़ होना - प्रारंभ होना

जी छूटना - (मुहा०) साहस छूटना

कलेजा पानी होना -(मुहा०) डर जाना

पाँव उखड़ना - (मुहा०) भागना, पीछे हटना

बेड़ा डुबोना-काम खतम करना, मारना

आन की आन में - क्षण भर में,तुरन्त

छाती से धुआं उठना - (मुहा०) आह निकलना, दुखी होना

भँवर - पानी का चक्कर

ग़ोल - समूह, झुण्ड

डोलची - छोटी बाल्टी

खेत - क्षेत्र, रणक्षेत्र

थड़जिए - तंग-दिल, कायर

लहू पानी एक हुआ - (मुहा०) लहू पानी की तरह बह गया

लब - ओंठ

नील ढला - आँखों की पुतली घूम गयी (मरने के समय)

'आरज़ू ......कितना पानी' - (भाव) खोज करने–सोचने पर इस कविता का भाव मालूम पड़ेगा। यह कविता उथली (भाव-शून्य) है। फिर भी इसमें कितना पानी(भाव) है—इसका तभी (खोजने पर) पता लगेगा।

झूठी प्रीत

फ़ानी - क्षणभंगुर

मौजें - लहरें, (भाव) यहाँ लोग अभिलाषाएँ करते हैं, मगर दुनियाँ अपनी राह ही जाती है।

मीत - मित्र

दूसरी बहार

बादल



नूर आना - प्रकाश आना, खुश होना

सुरूर - आनंद, नशा

दम-क़दम - अस्तित्व

लहर-बहर - शोभा, शान

सैराब - सींचना, जल से भरा

दश्त - जंगल, वन, मैदान, खेत

शादाब - हरा-भरा

"सैराब…शहर है" - (भाव) खेत और जंगल अगर सिंच जायँ तो शहर भी हरे भरे हों। क्योंकि खेतों और जंगलों के बल पर ही तो शहर चमकते हैं।

अब्र - बादल

साज़ोनवा - ठाट-बाट, संगीत व सजावट

गुंचा - कली

मनका ढलना - मरने के समय गर्दन टेढ़ी होना

रैहाँ - एक तरह की सुगन्धित घास

समाँ - शोभा, दृश्य

कौंधना - चमकना, लपकना

सब्ज़ा - हरियाली

रौंदना - पैरों से दबाना

सबा - पूरब की हवा

नसीम - शीतल वायु

शमीम - सुगंधि

पेंगें बढ़ाना - झूले पर बैठकर या खड़े होकर झूले में गति देना।

आम के पपीहे - आम की गुठली से बच्चे एक तरह की सीटी (Whistle) बनाते हैं।

सावन के गीत - बरसात के मौसम में गाये जानेवाले गीत, कजली वगैरह।

मल्हार - एक राग (मलार)

टिकोर - हलकी चोट, थपकी, ताल

गर्मी



ज़ार - स्थान

सू - तरफ़

तहे-अफ़लाक - आसमान के नीचे

खिलकत - सृष्टि, संसार

जा - जगह

सीमाब - पारा (पसीने का उपमान)

आफ़ताब - सूरज

शमअ - दीपक, बत्ती (मोमबत्ती)

सूरत - तरह

चौपदे



मग़रूर - घमंडी

ख़ुलूस - खलूस, सच्चाई, सरलता

ज़ाहिद - ईश्वर का सेवक

दीन - धर्म

ज़द - चोट, लक्ष्य

जी है तो जहान - प्राण बचे तो दुनिया है, जान बचाना धर्म बचाने से बड़ा काम है।

तबीब - हकीम, वैद्य

आज़ार - बीमारी, रोग, मुसीबत

मशग़ला - दिल-बहलाव

बे-कार - बिना काम के लोग

अलम - हुकूमत, झंडा

सहरा - जंगल

चटियल - सूना, बिना पेड़-पौधों का

अदबार - बेहाली, विपदा

ख़ाक जिये - जीना व्यर्थ है

समाअत - सुनवाई

दानाई - अक्लमंदी

अफ़साना - कहानी, गप्प

दाना - अक्लमंद

'धोने की······बाक़ी' - ऐ! सुधारक अभी सुधारने की जगहें बाकी हैं।

तलक - तक

जअफ़ - कमज़ोरी

पीरी - बुढ़ापा

मुहाल - असंभव, कठिन

ढलना मालूम - हटना नहीं मालूम

वाइज़ - उपदेशक

अजल - मौत

अटल - जो नहीं हटे, नहीं बदले

चन्द शेर



मशरक़ी - पूरबी देश के लोग, भारतीय

अहदे-वफ़ा - सामयिक कर्तव्य, धर्म

मोम की पुतली - गोरी लड़कियाँ, युरोपिय मिस

चमने-हिन्द की परियाँ - हिन्दुस्तान की देवियाँ

मग़रिब - पश्चिम, युरोप

तरंग आना - ज़ोर आना

नुक्ता - पते की बात, रहस्य

रविश-दीने-ख़ुदा - धर्म और ईश्वर का रास्ता

हज़रते-आदम - धार्मिक विश्वास है कि आदम (मनु) से आदमी पैदा हुआ। मगर डारविन ने साबित किया कि मनुष्य बन्दरों का विकसित रूप है।

हिकमत - बुद्धिमत्ता

आनर (Honour) - इज़्ज़त, प्रतिष्ठा

ख़ब्ती - पागल

ज़बान के पहलू पर - भाषा के मामले में, भाषा की तरफ़ (भाषा के झगड़े में)

तोबा - राम राम

क़दमे-शौक - उल्लास से क़दम बढ़ाना

बे-पास - बिना उत्तीर्णता के

मौकूफ़ - बन्द, रुका हुआ

मुरव्वत - मेहरबानी, रिआयत

रुख़ - ढंग

फ़रिश्ते - देवता के दूत (यमदूत)

तअस्सुब - पक्षपात (कट्टरपन) (यह शेर व्यंग में कहा गया है)

"हुकूमत····बन्दे" - (भाव) यह हिन्दुस्तानी ख़्याल है कि हमारा क्या—जो भगवान करता है, वही होता है। इसी वजह हमारी राजनीतिक अवनति हुई है। शायर उसी ख़्याल की मखौल उड़ा रहा है।

किया की - करती रही (उदाः– देखा किए)

शोरिश - शोर-गुल

सदा - आवाज़

बॉल - एक अंग्रेज़ी नाच

बुत - मूर्ति, सुन्दरी (यहां भावना के अर्थ में)

अलीगढ़ का भाव - (भाव) सर सैय्यद अहमद ने मुसलमानों को अंग्रेजी की तरफ़ रुजू किया। अलीगढ़ में कालेज खोला, फिर वह मुस्लिम युनिवर्सिटी बनी। मुसलमान अंग्रेज़ी पढ़ने और नौकरियाँ पाने लगे। शायर (अकबर) अंग्रेज़ी शिक्षा के दुश्मन थे। उन्हें सर सैय्यद का यह काम पसन्द नहीं आया। उसी के प्रति यह व्यंग किया गया है।

गुदाम - Godown, माल भरने की जगह (भाव—व्यापार हो, पैसा मिले तो फिर मसज़िद अर्थात् धर्म की ज़रूरत ही क्या है?)

आगाह - ज्ञानवान, सावधान

बा-हुनर - हुनरमंद, कुशल, चतुर

खुफ़िया पुलिस - C. I. D.

इंजन - (साइंस से मतलब है)

भाप देना - बीमारी दूर करने के वास्ते भाप देते हैं। (व्यंग्य है)

फ़ालतू - ज़रूरत से ज़्यादा

मतीअ - गुलाम, परतंत्र

खैर-ख़्वाह - भलाई चाहनेवाला

हलाल - उचित, पुण्य

हराम - अनुचित, पाप

चट करना - खाना

पीरू हरबंस - साधारण हिन्दू व मुसलमानों के नाम। (भाव) मुसलमान और हिन्दू जाति से है।

बहर-हालत - फ़िलहाल

बिला - बिना

थिरकना - नाचना

ख़िताब - पदवी

ज़ौक़ - खुशी, आनन्द

सर - सिर और Sir (श्लेष)

बाल - केश और नाच (श्लेष)

चिनौटी - चूना रखने की छोटी डिब्बी (नास लेनेवाले की तरह तमाखू खानेवाले भी चूना के वास्ते चिनौटी रखते हैं। यहां कवि खिचड़ी सभ्यता के प्रति व्यंग करता है।)

एतदाल - परहेज, मध्यमार्ग, शांति

जोड़ - सम्बन्ध, मिलान, समन्वय

'पयोनियर' - लखनऊ से निकलनेवाला गोरा अंग्रेज़ी अख़बार जो सरकारी पक्ष का समर्थन करता है।

राहे-मग़रिब - पश्चिम (युरोप) की राह, पश्चिमी सभ्यता

वाँ - वहाँ (युरोप)

हरचन्द - यद्यपि, अगरचे

पॉट - (Pot)

हिन्दी - भारतीय

रग़ - नस

'शौक़े......सर्विस' - I. C. S. कि परीक्षा रूपी लैला,(प्रेमिका)

मजनून - लैला का प्रेमी, आशिक

'लंगोटी...पतलून को' - दौड़ते-दौड़ते पतलून फटकर लंगोटी बनकर रह गयी है। मतलब—I. C. S. के पीछे आजकल के नौजवान दौलत बर्बाद कर ग़रीब बन जाते हैं।

रविश - रास्ता

हवाए दहर - ज़माने की हवा

मौज़ - लहर, तरंग (तरंगें आपस में टकराती हैं और फिर गिरकर एक हो जाती हैं। अकबर कवि कहते हैं, हिन्दू-मुसल्मान आपस में लड़ो भी तो फिर मिल जाओ।)

नामा - पत्र, ख़त

पैग़ाम - सन्देश, खबर

रख के खाना - (भाव) जो फल कि चार दिन ठहर रुकें; इतने पके न हों कि जल्द खराब हो जायँ।

पुख़्ता - पका, मज़बूत

ख़ाम - कच्चा

तामील - आज्ञा का पालन

बन्दा तेरा



[इस शायरी में परमात्मा और जीव का रूपक है। आशिक माशूक का भाव भी लिया जा सकता है। कबीरदास के ऐसे बहुत-से पद्य हैं।]

काबा - मक्का, तीर्थस्थान

जलवा - शोभा, रूप, सौंदर्य

जीना - जीवन

हस्ती - अस्तित्व Existense.

"मरना तेरा''''परदा तेरा" - तुम्हारा पर्दा करना अर्थात् दर्शन न होना ही हमारे लिये मौत है।

दीद - दर्शन

शग़्ल - काम-धंदा

सौदा - प्रेम, पागलपन, धुन

ग़मज़ा - अदा, हाव-भाव (तुम्हारी अदा ने मेरा दिल चुराया है)

मंशा - इच्छा (जो तुम्हारी इच्छा हो वही मेरा भाग्य होगा।)

बन्दगी - सेवा (बन्दगी ही तेरी ख़िद-मत होगी)

बन्दा - दास, सेवक, बन्दगी करने-वाला

तपिश



तपिश - गरमी

तमाज़त - गरमी, तपिश

बरंगे-शरर - चिनगारी के रंग का

रेगे-बयाबाँ - जंगल का बालू

मश्क - पानी ढोने की ख़ाल, मशक

पाए-निगह - नज़रों के पाँव (नज़ा-कत दिखाने के वास्ते)

आबले - फफोले, छाले,

गुज़र - गति, जाना

बलन्दी - ऊँचाई

घटा



ऊदी - आसमानी रंग

रंग पर आना - (मु०) निखर जाना, जोश पर आना

पर तौलना - संभालना, चिड़िया का कहीं बैठने के पहले परों को बैलेंस करके उतरना।

नै - बाँसुरी, सुर

तानें लड़ाना - कोयल और पपीहे वसंत ऋतु में एक दूसरे से बाज़ी लगाकर बोलते हैं। होड़ लगाकर गाना।

दोश - कंधा

हरसू - हर तरफ़

ज़ुल्मत - अंधेरा

आशकार - प्रत्यक्ष

दामने कोह - पहाड़ की गोद

जूए-शीर - दूध की नदी

कि - और

गिरयाँ - रोता हुआ

ख़न्दाजन - हँसनेवाला

चर्खे-कुहन - पुराना आसमान, बूढ़ा आसमान

चोट



तार - दिल का तार, हृत्तंत्री

ज़मज़मा - हल्का राग, संगीत (जब दिल पर कोई चोट लगती है तब उसका दर्द मीठा—संगीत की तरह शीतल, पर चुभनेवाला होता है।)

हवादिस - हादिस का बहु०, घटनाएँ

बिसात - हस्ती, ताक़त

चुटकी लेना - मज़ाक करना

रगो-पै - नस-नस, अंग-प्रत्यंग

नफ़स - प्राण

दर्द-मंदाने - दर्दवाले

सोज़ - जलन, दुख

साज़गार - शुभ, अच्छा

मस्दर - मूलस्थान, उद्गम

तबीई - प्राकृतिक, स्वाभाविक

गुदाज़ - द्रवित करनेवाला, बढ़ानेवाला

तबए-मौज़ूँ - ठीक तबियत

आह - रोना, करुणा

वाह - हँसना, ख़ुशी

शग्ले-अहले-दिल - दिलवालों–सहृदयों के वास्ते एक दिल-बहलाव की चीज़,

तौहीद - एकता

जुगनू



काशाना - झोंपड़ी, घर

अंजुमन - सभा, समूह

सफ़ीर - राजदूत

गुमनाम - छिपा, अप्रसिद्ध

तुकमा - बटन, घुंडी

क़बा - चपकन, चोग़ा

पैरहन - पोशाक़
पोशीदा - छिपा हुआ
खिलवत - एकांत
ज़ुल्मत - अंधेरा
गाहन - ग्रहण (चन्द्रमा का)
तालिब - चाहनेवाला
सरापा - डूबा हुआ, शराबोर

साहिर के कुछ शेर



बहरे-हस्ती - दुनियाँ रूपी समुद्र
अज़ल - शुरू, आदि
बादबाँ - पाल, Sail
लंगर - Anchor; नाव बाँधने के वास्ते लोहे के भारी काँटे
कैफ़ - नशीला पदार्थ
यक़ताई - एकता, अनोखापन
तमाशाई - तमाशा देखनेवाला
जल्वा-आरा - शोभा बढ़ानेवाला
जल्वा-गर - ,, ,,
रज़ा - रुखसत, छुट्टी
खम - नीचा, झुका हुआ
तसलीम - सलाम, नमस्कार
क़तरा - बूंद
वासिल - पहुँचा हुआ, संयोगी
(जब जीव से 'अहं' का भाव मिट जाता है तब वह ब्रह्म में मिल जाता है।)
कीना - दुश्मनी
क़ल्ब - दिल, हृदय
आरिफ़ - ज्ञानी, पहचाननेवाला
इबरत - अनुभव
अनलहक़ - 'अहं ब्रह्म'
लब - ओठ
(मंसूर-सूफ़ी साधु—जो अपने को ब्रह्म कहता था, क्या वह यों ही कहता था ? नहीं, उसके अन्दर जो ब्रह्म छिपा था, उसी ने उसको ऐसा कहने को मजबूर किया।)
नज़रगाह - रंगशाला, Stage
आइनाए-दिल - दिल का आइना,
हैरती - चकित
दामे-अजल - मौत का फंदा
"दूर···दिल से"–Out of sight, out of mind.
क़ौलो-फ़ेल - वचन व कर्म

इक़बाल के चन्द शेर



इन्तहा - अंत

पैरहन - झंडा

ग़स्साल - मुर्दे को नहानेवाला (दफ़न करने के पहले)

नुज्ज़ार - बढ़ई

रन्दा - Carpenter's plane
लकड़ी बराबर व चिकनी करनेवाला यंत्र ।

सत - सत्य

तत - तत्व

एक ही थैली के चट्टे-बट्टे - (मु०)
एक ही रूप या गुणवाले

बिस्वादारी - ज़मींदारी

जौहर दिखाओ



लगाव - सम्बन्ध

बातिल - झूठ

महो-मिहर - चांद-सूरज

अक़लीम - सलतनत, राज्य

किसी का दिल हाथ में लेना - (मुहा०)
इज़्ज़त व विश्वास प्राप्त करना

दफ़्तरी - आफ़ीस सम्बन्धी

इक़्तदार - (शासन) ताक़त

चल-चलाव - अन्त समय

हसरत के शेर



बे-ख़ुदी - अपने को भूले रहना, बेहोशी

बेताबियाँ - परेशानी, व्याकुलता

शकेबा - शान्त

गोया - मानों

समा जाना - खुब जाना, घर कर जाना,

शबे-फ़ुर्क़त - वियोग की रात

मुद्दआ - उद्देश, अभिप्राय

फ़ानी साहब के अशआर



अशआर - शेर का बहुवचन
बशर - मनुष्य
ज़ीस्त - ज़िन्दगी
रूदाद - समाचार, विवरण
ग़ैब - परोक्ष, परलोक
हमदम - साथी

महात्मा गांधी



तसर्रुफ़ - अधिकार
मुसख़्ख़र - पाला हुआ, वशीभूत
तहलील - पचाना, गलाना
फ़ितरी - प्राकृतिक
लताफ़त - कोमलता, उत्तमता
सीमगूं - चाँदी के रंग का (रुपया)
फ़सूँ - जादू
डेढ़ अच्छर - छोटा-सा पर महत्व का
कामरां - सफल, विजयी
नातवां - कमज़ोर

अज़ीज़ के चुने शेर



अयाँ - ज़ाहिर
क़फ़स - पिंजड़ा
आशियाना - घोंसला
क़ब्ल - पहले
जा-बजा - जगह-जगह

बेबसी



गुंचः - गुंचा, कली
सरबस्ता - छिपा हुआ
याराने-शबाब - जवानी के दोस्त
कँवल - दीपक (शीशे का गिलास जिसमें शमा जलती है)
रहबर - पथ-प्रदर्शक

हरमो-दैर - मसजिद व मंदिर
क़ालिब - शरीर, ढाँचा
फितरत - समझदारी, विवेक
ख़बर - ज्ञान, जानकारी
नज़र - पहचान
बोटी - मांस

गोशए तनहाई



गोशा - कोना, कुंज
तनहाई - एकांत
राहत - सुख, आराम
तमन्नाई - चाहनेवाले
तसकीं - शांति
जुज़ - सिवा, अलावा
आइन-ए-बातिन - दिल का आइना
तारीक - अंधेरी
मरग़ूब - रोचक, सुन्दर
तरीं - बहुत
अशजार - पेड़ का बहुवचन
कि - या
मुसव्विर - चित्रकार
मज़मून - विषय
मतालिब - मतलब का बहुवचन

बुलबुला



फ़रऔन - मिश्र देश के शाही ख़ानदान का एक प्रतापी बादशाह जो ईस्वी सन् से पहले हुआ था।
आन-बान }
आब-ताब } - शान-शौक़त
गुहर - मोती
ज़ेबे-सर - सिर पर शोभित

कामयाबी का राज़



अब्रे-नेसाँ - स्वाति नक्षत्र
दुरे शहवार - मोती, बादशाहों के लायक़ मोती, (विश्वास है कि स्वाति नक्षत्र की बूंद जब समुद्र की सीपियों के मुख में पड़ती है तब मोती की पैदाइश होती है)

तफ़्ता - (ज़मीन का) छोटा टुकड़ा
पाराए-आहन - लोहे का टुकड़ा
महकूम - अधीन, ग़ुलाम
ख़ुद-मुख़्तार - आज़ाद, अपना मालिक आप
दहक़ान - देहाती, गंवार
काचार - तुर्क के पहलवी बादशाहों के पहले के खांदान का एक बादशाह
दार - सूली, फाँसी

अमजद के चौपदे



कलाम - कथन, वचन, कविता
ज़ाया - व्यर्थ, नष्ट, बेकार
सर-फ़रोशी - बलिदान
आता हूँ पहनके - (क़फ़न से अर्थ है)
रब्बे-ग़फ़ूर - करुणा-सागर, भगवान
मेहरे जहाँ - करुणा सागर, भगवान
ताब - चमक, शक्ति
जेप्लिन - हवाई-जहाज़ का एक किस्म
ज़ंजीरे-दरे-अर्श - आकाश की ज़ंजीर (प्रार्थना का भाव)
सिजदा - प्रार्थना, रगड़, घिसना
जब्हसाई - माथा टेकना
ताअत - इबादत
ख़ुदनुमाई - अहं, स्वार्थ
हत्तुल इमकान - दम भर, ताकत भर
शिकस्ता - टूटा हुआ

ख़ाके वतन



ख़ुरशीद - सूरज
पुरज़िया - चमकनेवाला
निहाँ - छिपा हुआ
ख़िलअत - सम्मान की पोशाक

रहे रहे न रहे



मुश्त - मुट्ठी भर
जनून - पागलपन
जमअ-ख़र्चे-ज़बानी - जबानी जमा खर्च, महज़ बातें

भूल गये



इब्तदा - शुरुआत
निफ़ाक़ - दुश्मनी, शत्रुता
गब्र - अग्नि-पूजक (हिन्दू)
लरजना - काँपना
ख़ुदी - स्वार्थ, अहंभाव
असीरी - क़ैद

चकबस्त के ख़्यालात



दर्द-अंगेज - दर्द बढ़ानेवाला
नाला - आह, पुकार
शैदा - आशिक, प्रेमी
अहबाब - प्रेमी
सौदा - धुन, सनक
बार - बोझ
सय्याद - शिकारी, घातक
ज़िन्दाँ - क़ैदख़ाना
बियाबाँ - बेपानी का जंगल
कविश - दुश्मनी

देखते



हद - सीमा
मंज़र - दृश्य
माहो-अख़्तर - चन्द्रमा-सूर्य
फ़ितरत - प्रकृति
चश्म - आँख
तड़पती बिजलियाँ - आँखों के अन्दर फिरनेवाली, नज़र
दम-ब-ख़ुद - सन्न, स्तब्ध, मूक
शीशे से बाहर - असली रूप में

क़सम



ख़िरमन - खलिहान
कमाँ - धनुष
तनतना - प्रखरता, तेजी
ख़ुद्दार - आत्माभिमानी
हंगाम - समय, ऋतु
रंग उड़ाना - (मुहा०) हँसी करना, तुच्छ समझना
जुम्बिश - हिलना, कंपन

ख़रीदार न बन

चुटकियाँ - परिहास, मज़ाक
गुलचीन - फूल चुननेवाला
बेख़ार - बिना काँटे का, सीधा-सादा
जिन्स - वस्तु, सामान

ग़रीबों की ईद



ईद - एक आनन्द का मुसलमानी त्योहार
अहले-दवल - दौलत का बहु० (अमीरों)
रोज़े-सईद - शुभ-दिन
चर्ख़ - भाग्य, आकाश
फ़र्ते-मुहन - दुख की अधिकता
तही - ख़ाली
वलवला - उमंग, जोश
सबात - मज़बूती
हुजूम - ढेर
हम-आगोश होना - लिपट जाना

नया पुजारी



यासमन - चमेली, Jasmin
क़शक़ा - तिलक
ग़ुलामे-ग़ुलामाने - ग़ुलामों का ग़ुलाम
ज़मज़म - क़ाबे के पास का कुआँ जिसे मुसलमान बहुत पवित्र मानते हैं।
परस्तिश - पूजा
परस्तार - पुजारी
गेसू - बाल (यहां हिन्दू ललना से मतलब है)
सीम-तन - चाँदी की तरह बदन (गोरी स्त्री)
शोलए अंजुमन - सभा की आग
कनीज़ - दासी
दुख़्तर - लड़की, बेटी,
ख़तीब - ख़ुतबा पढ़नेवाला, चेतावनी देनेवाला
ज़रकार - सुनहला
मिम्बर - चबूतरा, जिस पर से उपदेश दिया जाता है, Pulpit
कलीसा - गिरजा घर
तरक़्क़ी-दहे-बज़्मे-ईजाद - नयी बातों को तरक़्क़ी देनेवाली जमात
अक़ीदा - धर्म, विश्वास
ज़ुन्नार - जनेऊ
तसबीह - जपमाला, सुमरनी

राज दुलारे सो जा



परवान चढ़ना - तरक्की पाना

अज़मत - बड़प्पन, महत्ता

हशमत - सम्पत्ति

बख़्त - भाग्य, क़िस्मत

बाज़ - विशिष्टता

गोरी चिट्टी - बहुत गोरी

सदक़ा - निछावर

तीसरी बहार

अकबर के जज़्बात



साज़ - बाजा, संगीत, वाद्य

गत - चाल, राग

फ़लक - आसमान

दौर - कालचक्र

बातिन - भीतरी

ख़ुदा का नाम लेना - सच्ची बातें कहना, (देश-भक्ति वग़ैरह की बातें करना)

रक़ीब - प्रतिद्वन्दी, दुश्मन

रपट - रिपोर्ट

मियाना - डोली, पालकी, (शेख़जी तो पुराने ख़्याल के ही रहे, मगर उनके अनुयायी बहुत आगे बढ़ गये हैं)

कारे-नुमायाँ - स्पष्ट कार्य

महरूम - अभागे, बदनसीब

सर हुए - सरपर सवार हुए

बस्ता - बंधा हुआ

पायमाल - कुचला हुआ, दुर्दशाग्रस्त

डॉसन - एक आदमी जिसने नये क़िस्म का बूट बनाया था।

जूता चलना - (मु०) झगड़ा या मार पीट होना

मजमूँ - निबन्ध, विचार

नागहाँ - एकाएक
ख़िरदमन्द - बुद्धिमान
बाहम - आपस में
तवक़्क़ा - आशा, उम्मीद
पिंडली - टांगों के पीछे की माँस-पेशी

(सफ़ा १२२)

तारी - छायी
शै - चीज़
तहमद - लुंगी
छापा - अख़बार, Publicity
तक़वियत - ताक़त
बिसात - ताकत, सामर्थ्य
पेशे-कमीशन - कमीशन के सामने
जश्न - उत्सव, जलसा

(सफ़ा १२३)

क़हत - अकाल
फ़ाक़ा - उपवास
पड़ाका - आतिशबाजी
उरूज - उन्नति
मअराज - उच्चतम स्थान
ताजिर - व्यापारी
तीन-पाँच - घुमाव-फिराव, छल
शुअला - शोला, तफ़रक़ा
हाँड़ी - हंडी, खाना पकाने का बर्तन

[मौ. अकबर इलाहाबादी बड़े ऊँचे दर्जे के व्यंग और ध्वनि के पारखी थे। आपकी शायरी का एक २ लफ्ज़, ताने से, चोट से भरा है। शब्द कुछ हैं और उनका निशाना कुछ है। नयी रोशनी, नये फैशन, सरकार, नयी तालीम वगैरह को कहीं आपने छोड़ा नहीं है। अलीगढ़ यूनिवर्सिटी से भी आप चिढ़े रहते थे। आप धर्मिष्ठ व्यक्ति थे।

इसलिए आपकी शायरी पढ़ते वक्त पाठक और शिक्षक उनके इशारों की तरफ़ ज़्यादा ध्यान देंगे, तभी उसका मज़ा मिलेगा, अन्यथा नहीं।]

एक वाक़या



[यह वाक़या इस्लाम के दूसरे ख़लीफ़ा हज़रत उमर फ़ारूक़ से ताल्लुक़ रखता है। ईरान फ़तह करने के बाद अरबवालों को बहुत माल हाथ लगा था। अपने फ़ायदे के मुताबिक सारी चीज़ों का बटवारा

बराबर २ कर दिया गया था। हज़रत उमर ख़ुद बड़े क़द्दावर थे। उनके हिस्से में जो कपड़ा मिला था—उससे उनका चोग़ा नहीं बन सकता था। और ख़लीफ़ा के पास कपड़े न थे। इसलिए उनके सआदतमंद लड़के ने अपने हिस्से का कपड़ा भी उन्हें दे दिया और तब उनका लबादा बना। यह ख़बर लोगों को न थी। दूसरे दिन जब किसी ने उनका चोग़ा देखा तो उसे शक हुआ कि ख़लीफ़ा ने बेईमानी से अपने वास्ते ज़्यादा कपड़ा ले लिया है। झट उठकर उसने इसका विरोध किया और सफ़ाई मांगी। मामूली से मामूली आदमी को भी अरब में उन दिनों ख़लीफ़ा के बराबर खड़े होने, खाने-पहनने और बोलने का हक़ था। ख़लीफ़ा को जवाब देना पड़ा और तभी वह जवान संतुष्ट हुआ। नहीं तो वह ख़लीफ़ा का हुक्म मानने को तैयार या मज़बूर नहीं किया जा सकता था। क्या वह राम-राज से कम था?]

अद्ल - न्याय
फ़ितूर - धोखा,
माले-ग़नीमत - लूट का धन
तक़सीम - बाँट
रिदा - चादर
मुख़्तसर - छोटा, संक्षेप
दराज़ - बड़ा
मस्तूर - छिपना, ढकना
ख़िलाफ़त - ख़लीफ़ा का पद
मामूर - मुकर्रर किया हुआ, आज्ञाकारी
मसावात - बराबरी
मख़मूर - मतवाला, मग्न
फ़र्ज़न्द - लड़का, बेटा
मुअज़्ज़म - बड़ा माना गया
उबूर - जानकारी, पारदर्शिता
जानिब - तरफ़
रब्बे-ग़फ़ूर - बख़्शनेवाला, भगवान
इब्ने-उमर - उमर का लड़का
वालिदे-माजिद - बुज़ुर्ग पिता
तबए-ग़यूर - आत्माभिमान
नुक्ताचीं - निन्दक, दोष निकालने वाला

इंसाफ़



[हज़रत मुहम्मद साहब ने अरब में जो खिलाफ़त शुरू की उसके आदर्श बहुत ऊँचे थे। वे ख़ुद और उनके बाद खिलाफ़त की गद्दी पर बैठनेवाले खलीफ़ा लोगों ने जो ग़रीबी, इंसाफ़-पसंदगी, व ऊँचे दर्जे का चारित्र्य संसार के सामने रखा, वह अनुकरणीय है।

इस शायरी में जिस वाक़या का ज़िक्र आया है, वह हज़रत मुहम्मद साहब के वक्त में गुज़रा है। उनकी प्यारी बेटी सईदा—बेगम फ़ातिमा—थीं। हज़रत अली के साथ इनकी शादी हुई। वह ख़ुद झाड़ू बुहारू करतीं, पानी भरके लातीं, आटा पीसतीं, रोटी पकातीं—दुनियां भर के काम करतीं। यह अरब के खलीफ़ा और मुसलमानों के धर्म गुरू की प्यारी बेटी का हाल था।]

सय्यदए-पाक - हज़रत मुहम्मद साहब की लड़की फ़ातिमा बेगम के लिए यह प्रयोग हुआ है।

नील-फ़ाम - नीले रंग का

मश्ग़ला - काम

जनाबे-रसूले-ख़ुदा - भगवान के दूत (हज़रत मुहम्मद)

वाँ - वहाँ

इज़्ने-आम - आम मजमा, सभा

महरम - परिचित

हैदर - हज़रत अली का नाम

पयाम - सन्देश, कथन

इर्शाद हुआ - कहा, फ़रमाया

सीग़ा - महकमा, विभाग

नबुवी - नबी से सम्बन्ध रखनेवाला (वह महकमा जिसे ख़ुद नबी—मुहम्मद साहब—सम्हालते थे।)

क़याम - ठौर, जगह, विश्राम-स्थान

फ़ारिग़ - मुक्त

हनोज़ - अभी तक

इहतिमाम - एहतमाम, देख-रेख

मुक़द्दम - पहला, प्रधान, मुख्य

जुरअत - हिम्मत

अहले-बैते-मुत्ताहन - (लोग-घर-पाक) पैगम्बर साहब के खानदान के लोग।

दुख़्तरे-ख़ैरुल-अनाम - हज़रत महम्मद साहब की बेटी। (ख़ैरुल अनाम हज़रत मुहम्मद साहब की एक टाइटिल थी, जिसका अर्थ था—लोगों के वास्ते नेकी करनेवाला)

पहले नज़र पैदा कर



अयां - स्पष्ट, ज़ाहिर

निहां - छिपा, अस्पष्ट

इम्तियाज़ - पहचान, तमीज़ करना

नाक़िस - अपूर्ण, बुरा, निकम्मा

क़ामिल - योग्य, अच्छा

फ़नाज़ात - तपस्या वगैरह

सरफ़राज़ी - प्रतिष्ठा, गौरव

ख़ाकसार - दीन, तुच्छ, नम्र

सवेरा



नजूम - तारा

सहर - सबेरा

छाँ - छाँह

नज़ूल - गिरना, नीचे आना

ज़िया - सूरज की रोशनी (उगते हुए सूरज की किरणें)

सरगर्म - मशगूल

ख़ाब - नींद

फ़िज़ाए-सहर - सुबह की शोभा

अनादिल - बुलबुल

तयूर - चिड़ियाँ

पारसा - धर्मनिष्ठ, सदाचारी

नग्मा-सरा हुए - गाने लगे

शुआएँ - सूरज की किरणें

जाफ़रानी - केसरिया रंग का

शफ़क - संध्या राग, लालिमा

जौ-फ़िशाँ - जगमगाने लगना

बहार - वसन्त

ख़िज़ाँ - पतझड़

कुछ गहरे शेर



बक़ा - अमरता

नश्शा - नशा

ख़ुमार - नशा के उतरने के बाद की हालत

इक़रार - स्वीकृति

सरापाए-दुआलम - दोनों लोकों में भरपूर

पिन्दार - अहंभाव

सामए-कोनो-मकाँ - मकान (संसार, शरीर) के हर कोने को बनानेवाला

सनअत - कारीगरी, कौशल

तामीर - भवन-निर्माण

शजर - पेड़

तुख़्म - बीज

दाना - बीज, ज्ञानी

कीमियागर - रसायन शास्त्री

रज़ा - आज्ञा, छुट्टी, इच्छा

ख़म - झुका

ख़ुश गवार - मनोहर

ना-गवार - अप्रिय

तहक़ीर - बेइज़्ज़ती

तौक़ीर - आदर, सम्मान

जुज़ - टुकड़ा

दीदाए-बीना - सूझनेवाली आँखें, ज्ञान चक्षु

ख़ुर्शीद - सूरज

अहले-बसर - ज्ञानी

आपे से - अपने से, अहंभाव

रहगुज़र - रास्ता

ना-हमवार - ऊँचा-नीचा

अर्ज़ाँ - सस्ता

सरबस्ता - छिपा हुआ

राज़दाँ - भेद जाननेवाला

पैकर - चेहरा

ख़ुदनुमा - घमंडी

महूवे-ख़ुदाराई - अपनी शान बढ़ाने में मस्त

ख़्वाहिश



अंजुमन - सभा, सोसाइटी

शोरिश - शोरोगुल, हलचल

सकूत - शांति

कोह - पहाड़

उज़लत - एकान्त
सरोद - तारवाला एक बाजा
चश्मा - झरना, सरिता
साग़र - प्याला जिसमें दुनिया दीखे (ईरान में जमशेद बादशाह के पास एक ऐसा ही प्याला था।)
गोया - मानों
जहाँ-नुमा - संसार दिखानेवाला
जलवत - भीड़ भम्भड़, शोरगुल
मानूस - मिली हुई
सफ़अ - क़तार, पंक्ति
जानिब -तरफ़
बूटे - पैधे, लता
कुहसार - पहाड़
मौज - लहर
क़बा - चोगा, गाउन
मुअज़्ज़िन - अज़ाँ देनेवाला
हमनवा - साथ गानेवाला
रौज़न - छेद।
सहर-नुमा - सबेरा बतानेवाला
वज़ू - नमाज़ के पहले हाथ-पैर धोना
नाला - रोकर प्रार्थना करना, आह
दरा - नगाड़ा, घंटे की आवाज़ (कारवाँ निकलने के पहले का घंटा)

विधवा



सोज़े-हिरमाँ - दुख की जलन
बद्धियाँ - माला, तसमा
लज़्ज़ते-ज़ौक़े-ख़लिश - दुख उठाने का मज़ा
सिनाँ - तीर, बर्छी
तारीक - अंधेरा
गेसू - बाल, लट
अम्बर-फ़सां - इत्र में बसा हुआ
आतिशे-ख़ामोशी - दबी आग
अब्रे-करम - दयारूपी बादल

हसरत भरे शेर



सियाकार - बुरे काम करनेवाला
बा-सफ़ा - शुद्ध, पवित्र
दमे-वापसीं - आखिरी साँस
पुरसिश - कुशल पूछना

पैकरे-इलतिजा - आकांक्षा की तस्वीर

खिरद - अक़्ल, विवेक

जनूँ - पागलपन

करिश्मा-साज़ - अद्भुत काम करने-वाला

नादिम - शरमिन्दा

इलाही - ख़ुदा, भगवान

जानाँ - माशूक, प्रिय

अश्कबार होना - रोना

यास - निराशा

अहले-नज़र - दृष्टि रखनेवाला

रू - चेहरा

हिजाबे-नूर - लज्जा का सौंदर्य

मस्तूर - छिपा

बरहम - नाराज़

चन्द मीठे शेर



नाकामी - असफलता

कूचा - गली

तनहा - अकेला

तमन्ना - अभिलाषा

मुश्ताक़ - बहुत इच्छा या कामना रखनेवाला

सोसाइटी



नापाक - अपवित्र

मज़मा - समूह, भीड़

हैबतनाक - डरावना, भयंकर

मरक़ज़ - केन्द्र, जगह

ज़हर-आलूदा - विष भरा

मुहज्जब - सभ्य

मुनज़्ज़िम - संगठित

शोबदा-सामाँ - जादूगर

जथा - जत्था, समूह, दल

ख़ुदराय - स्वेच्छाचारी

ख़ुद-बीं - घमंडी

ख़ुद परस्त - स्वार्थी, मतलबी

ना-शाइस्ता - असभ्य

हलक़ा - टोली, दल

जमाअत - दल, समूह
एतमाद - विश्वास
शरंगेज - झगड़ालू
ज़ाद - उत्पन्न, पैदा हुआ
बातिल-क़दा - झूठ का घर
पुरसिश - पूछ
जमीर - विवेक
ता-दूर - तक
तख़रीब - बर्बादी, नाश
आतिश - आग
बद-रस्मियाँ - बुरे रिवाज़
अख़लाक - नीति, शील, चरित्र

रियाकारी - दग़ाबाज़ी, धोखा
हसद - ईर्ष्या, द्वेष
मजबह - वध-स्थान
मक़तल - वध स्थान
कज़-निगाह - टेढ़ी नज़रवाला, बुरी दृष्टि वाला
शोरिशगह - झगड़े की जगह
फ़ितना - झगड़ा
बेदार - जागृत
बुग्ज़ - ईर्ष्या-द्वेष
किब्र - घमण्ड
ग़ारत - नाश, चौपट

सितारों के गीत



मासूम - निष्पाप, निरीह
इलहाम-क़दा - प्रेरणा का घर (आकाश)
शीरीं - मीठा
ऐवान - घर
सरशारी - वर्षा
मग़मूम - रंजीदा
पस्ती - पतन, गिरावट
मख़लूक़ - पैदा किए, संतान
बाबस्ता - बंधे हुए
नूरी - स्वर्गीय, नूरवाले

ख़ाकी - लौकिक, इंसान
महरूम - वंचित, रहित
सरशार - भरा हुआ, मस्त
ताबिन्दा - चमकनेवाला
गराँ - भारी
ख़ाबीदा - सोया हुआ
सकूने हस्ती - जीवन की शांति
नेमत - नियामत, अलभ्य पदार्थ
पिछले को - उषा के पहले का समय
आईना - साफ़, स्पष्ट
दावत देना - बुलाना

अजीज़ के शेर



अहद - शासन, राज्य, निश्चय
खैरगुज़री - अच्छा हुआ, कुशल
बिजली-सी शै - प्रेम
ज़िन्दाँ - क़ैद-खाना
बियाबाँ - बयाबान, उजाड़
चारा-साज़ - दिलासा देनेवाला
हादिसा - घटना, वाक़्या
खाक की तामीर - नश्वर संसार
गुजश्ता - बीते हुए
सुहबत - सोहबत, साथ, संग
साहबे मातम - शोक मनानेवाले लोग

दर्द भरे शेर



रूदादे चमन - चमन का समाचार
हिम्मते-शरहो-बयाँ रख दी - साफ़ २ कहने की हिम्मत छोड़ दी।
नियाज़ - परिचय
ज़बीं - मस्तक, पेशानी
इज़्तराब - बेचैनी, दुःख
मआज़ल्ला - (मआज़ + अल्लाह) ईश्वर रक्षा करे (आश्चर्य या आशीष प्रकट करने या पनाह मांगने में)
तलातुम - समुद्र की बड़ी तरंगें, खलबली
ज़रे - नीचे,
ज़ेरे-आसमाँ - आसमान के नीचे, धरती पर
असरार - भेद, रहस्य
फ़ज़ा - शोभा
पुरकैफ़ - मस्ती से भरी
आवाज़े-शिकस्ते-साज़ - टूटे हुए बाजे की आवाज़
मजाज़ी - भौतिक, सांसारिक
नेशतर - नश्तर
रगे-जाँ - जान की रग, प्राणनाड़ी
गरेवाँ - कुर्ते का गला
साहिल - किनारा
परवर्दा - पली हुई
मुसव्विर - चित्रकार, ईश्वर
फ़ानूस - शीशे की गिलास, जिसमें बत्ती जलती है।
गरदिश - चक्कर, विपत्ति
मंज़िले-जानाँ - माशूक़ के दायरे में

नहीं होता



इहसास - अनुभव, भान

रुसवा - बदनाम

दफ़अतन - अचानक

बेशतर - ज़्यादातर

देरपा - देर तक ठहरनेवाला, मज़बूत

राहत-फ़ज़ा - खुशी बढ़ानेवाला

मैं कि - मैं ऐसा हूँ कि

सकून - शांति

दो शेर



बाक़ी - फ़ानी का उलटा

फ़ानी - नाशवान

मौज़जन - लहरें मारता हुआ

मानिन्द - तरह

हुबाब - बुलबुला

फांस - बन्धन, जाल

खटक - खटका, डर

चकबस्त के चन्द शेर



सदक़े जाना - न्योछावर होना

मन्तक़ - तर्कशास्त्र

करिश्मा - खेल

ज़ार - जगह

समर - फल, लाभ

जुन्नार - यज्ञोपवीत

आग़ोश



रिंद - अधार्मिक

मैक़दा-साज़ - मधुशाला बनानेवाला

मैक़दा बरदोश - मधुशाला साथ ले चलनेवाला

सरजोश - उबलनेवाला

दराग़ोश - आग़ोश का सिलसिला

नक़ूश - चिह्न

फ़रामोश - भूला हुआ

रूदाद - वृत्तांत, समाचार
नासिह - उपदेशक
रक़्स - नाच
जाम - प्याला
वहम - भ्रम, शंका

भूल

★

वज़्द - आनन्द में मग्न होकर झूमना, आनन्द विभोर होना
सूद - फ़ायदा
ज़ियाँ - नुक़सान, घाटा

यह फूल भी उठा ले

★

ग़मज़े - नख़रा, हाव-भाव
रुख़सार - गाल
ग़रूर - गर्व
ख़राम - अदा की चाल, मस्तानी चाल
फूल झड़ना - सौंदर्य या हँसी के अर्थ में

बीमार कलियाँ

★

बीमार कलियां - पीली बन्द कलियों से मतलब है।
महफ़ूज़ - सुरक्षित
सरमस्ती - ख़ुशियाँ
दोशीज़गी - कौमार्य
बहारिस्तान - बाग़
मलाहत - सौंदर्य, श्यामता
सबाहत - गोराई, सौंदर्य
कान - खान

हम्द

★

हम्द - प्रार्थना
वाली - मालिक
सर-सब्ज़ - हरी-भरी
बह - समुद्र

- ज़मीन
क़ - सूखा
- हरा
र - फल

करम - दया
ख़ालिक - सृष्टिकर्ता
ख़ुदाया - हे ईश्वर
हैवान - पशु

पपीहा



शनवा - सुन्दर गानेवाला
शअदा - अच्छे हाव-भाववाला
ुज़महिल - थका हुआ, शिथिल
ौत - आवाज़
ासद्दुक़ - न्यौछावर
ाँ-फ़िज़ा - अमृत
मुज़तरिब - बेचैन
नैसां - स्वाती की बूँदें, मोती, मकसद पाने की ख़ाहिश
ाब - दरवाज़ा

वहदत - एकत्व का भाव
सर्व - एक ऊँचा झाड़, Cypress (माशूक के आकार का उपमेय)
तवक्कुल - ईश्वर पर भरोसा, वैराग्य
कनाअत - सन्तोष, सब्र
आफ़रीं - शाबास, धन्य
मरहबा - शाबास, बहुत अच्छा
आहोज़ारी - रोना-पीटना
तसव्वुर - ध्यान

